

ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि सभा म.प्र. व विदर्भ का मुख पत्र

| नवंबर-दिसंबर २०१८

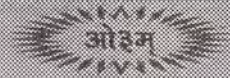
आर्य शैवक



"प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए"

- महर्षि दयानंद सरस्वती - हे ऋषि, हम आपके अनुयायी, तेरे बनाए नियम पर चलकर सभा को शक्तिशाली बनाए व सक्षम आर्य समाज अपने आसपास के गांवों-कसबों की आर्य समाजों को तन मन धन से सहयोग कर, संगठित होकर "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" को सार्थक करें - इसी प्रार्थना के साथ एक दीप तुम्हारे नाम

सभा कार्यालय - दयानन्द भवन, मंगलवारी बाजार, सदर, नागपुर (महाराष्ट्र)



आर्य सेवक

आर्य प्रतिनिधि सभा म. प्र. व विदर्भ का मुखपत्र

वर्ष - १९६ अंक १४
सृष्टि संवत् १९६०८५३११९
दयानन्दाब्द - १९५
संवत् - २०७५
सन् २०१८ नवम्बर-दिसंबर

अनुक्रमणिका

प्रधान

पं. सत्यवीर शास्त्री, अमरावती
मो.नं. ०९४२२१५५८३६

मंत्री एवं प्रबंधक सम्पादक

अशोक यादव
मो. ०९३७३१२११६३
०९५११८३८९८१

सम्पादक एवं उपप्रधान

जयसिंह गायकवाड़, जबलपुर
मो. ०९४२४६८५०९१
e-mail : jasysinghgaekwad@gmail.com
निवास - ५८०, गुप्तेश्वर वार्ड,
कृपाल चौक, मदन महल, जबलपुर

सह सम्पादक

प्रा. अनिल शर्मा, नागपुर
मो. ९३७३१२११६४
मनोज शर्मा
मो. ९५६१०७९८९४

कार्यालय पता :

दयानन्द भवन, मंगलवारी बाजार,
सदर, नागपुर-४४०००१ महाराष्ट्र
दूरभाष क्र. ०७१२-२५९५५५६

क्र. लेख	लेखक	पृष्ठ क्र.
१. संपादकीय	-	२
२. वेद प्रचार-पथोट में आयोजन	-	३
३. परमात्मा जीव (आत्मा) को हृदय रूप गुफा में मिलता है।	विद्यासागर शास्त्री	४
४. जिन्दगी-एक अनोखा सफर	अन्जना दीवान	५-७
५. मनुष्य के छः शत्रु कौन?	विद्यासागर शास्त्री	८-१०
६. समस्त आयु के लिए है-आयुर्वेद	डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह	११-१२
७. नारी शिक्षा व गुरुकुल प्रणाली के पुरोधा-स्वामी श्रद्धानंद	वेदारीलाल आर्य	१३-१४
८. क्रोध पर प्रेम की विजय	-	१४
९. डिजिटल इंडिया या पाखंडयुक्त भारत नयन कुमार आचार्य	-	१५-१६
१०. बला घर आ गई	प्रा. राजेंद्र जिज्ञासु	१६
११. बलात्कार मुक्त समाज के लिए लें संकल्प	सीताराम गुप्ता	१७-१८
१२. चमत्कारों का पोल खाता	इंद्रजित देव	१९-२२
१३. क्रोध महाचंडाल	-	२२

* * * * *

टीप - प्रकाशित कृतियों में व्यक्ति विचार लेखकों के हैं इनसे आर्य सेवक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

- संपादकीय -

इस अवसर पर.....

आर्यों, आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ जिसकी स्थापना सन में हुई, उसके पूर्व के पदाधिकारियों ने अपनी ईमानदारी, अथक परिश्रम से सभा को गौरवान्वित कर विश्व की समस्त प्रतिनिधि सभाओं में सर्वश्रेष्ठ सभा बनाया व आर्थिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्र में सफलताओं के शिखर पर पहुंचाया, किन्तु २००४ में दिल्ली में सार्वदेशिक सभा में हुई दुर्घटना के बाद देश में समस्त प्रतिनिधि सभाओं में हुये बिखरावों से यह सभा भी देश की समस्त प्रतिनिधि सभाओं में हुये बिखरावों से यह सभा भी अछूति न रह सकी। विचारों कि विभिन्नता, भवनों, स्कूलों। गुरुकुलों पर कब्जों का प्रयास, असत्य का बोलबाला, अहम का टकराव, या यूँ कहा जाये कि यज्ञ की प्रार्थना के ठीक विपरित आचरण करने का दुष्परिणाम हम सब झेल रहे हैं, व्यक्तिगत दुश्मनी बनाकर, सभा को नुकसान पहुंचा रहे है, दो बिल्लियों के झगड़े में बंदर मजा लूट रहे है, उन्हें इस बात पर विचार ही नहीं करना है कि हमें सत्य का साथ देना चाहिये, महर्षि के नियम असत्य को छोड़ने व सत्य को ग्रहण करने में उद्बुद्ध होकर सभा की उन्नति व प्रगति में सहभागी बन सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

आर्यों, देश की समस्त प्रतिनिधि सभाओं से अलग आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ है, जहाँ अन्य प्रतिनिधि सभायें रजिस्ट्रार आफ रजिस्ट्रेशन के नियम में पंजिकृत है, वहीं हमारी सभा व नियम मुम्बई पब्लिक ट्रस्ट एक्ट के अंतर्गत पंजिकृत ट्रस्ट है व उन्ही के अधिन पंजिकृत नियमानुसार सभा की समस्त कार्यप्रणाली, भू-सम्पत्ति, आर्य समार्यों का गठन, प्रथक करना, भंग करना, आदि का निर्णय लिया जाता है, २००४ से यह सभा नियमानुसार कार्यकारिणी का त्रैवार्षिक चुनाव वर्ष २०१६ तक पूर्ण कर वर्तमान कार्यकारिणी कार्य कर रही है व वर्ष २०१९ के त्रैवार्षिक चुनाव की प्रक्रिया प्रारम्भ हो चुकी है। अतएव समस्त समबद्ध आर्य समार्यों अपनी वार्षिक चित्रावली, समाज का दशांश आदि नियमानुसार सभा कार्यालय को पं. सत्यवीर शास्त्री प्रधान के नामे भेज देना चाहिये जिससे प्रतिनिधियों की सूचि तैयार की जा सके, जिससे निष्पक्ष चुनाव संपन्न हो।

आर्यों, विदर्भ कि प्रथम पत्रिका आर्यसेवक जो आपके दान व सहयोग से १२५ वर्षों से लगातार प्रकाशित हो रही है, इसे नियमित व आकर्षित रूप में प्रकाशित करने हेतु आपके सहयोग, दान की आवश्यकता है, अतएवं समस्त आर्य जगत का दायित्व है कि वह आर्थिक सहायता करते हुये अपने क्षेत्र में हो रहे कार्यक्रमों, वेदप्रचार, लेखों-कविताओं व कार्यों तथा विद्वानों के लेखों को प्रकाशन हेतु अवश्य भेजे.....

आपके स्वास्थ्य, शान्तिपूर्ण जीवन की मंगल कामना के साथ.....

* * * * *

- वेद प्रचार एक माह का पश्रोत मे आयोजन



आर्य समाज मंदीर पश्रोत द्वारा अधिक मास में डॉ. पवारपरिवार में गायत्री महायज्ञ का आयोजन किया गया था। उसका समापन दिनांक १०/०६/२०१८ को आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पं. सत्यवीर शास्त्रीजी, मंत्री अशोक यादवजी, प्रा. अनिल शर्माजी, संतोष गुप्ताजी तथा पं. कृष्ण कुमार शास्त्री जी की उपस्थिति में नगर शोभायात्रा के साथ सुसम्पन्न हुआ। इस एक माह के प्रचारार्थ उ.प्र. से विदुषी बहन यशोदाजी आर्या व उपदेशक बाबुराम आर्यजी ने अपना बहुमुल्य १ माह का समय देकर ग्राम ग्राम तथा घर-घर जाकर वेदों का महत्व तथा यज्ञ का महत्व समझाकर म. देवदयानन्द जी के वेद मार्ग पर चलकर ही परिवार समाज का कल्याण हो सकता हो। सभा के प्रधानजी ने सभी को एकता एवं भाईचारे का उपदेश देकर सभा को सशक्त हम कैसे बनायें इस पर जोर दिया प्रा. अनिल शर्मा जी ने सभी को जात-पात-छल-कपट भूलाकर संगठन के साथ जुड़ने के लिए प्रेरणा दी। संतोष गुप्ताजी ने पश्रोत आर्य समाज के प्रत्येक कार्यकर्ता को ऐसे महान कार्य करने के लिए शुभकामना दी।

इस अवसर पर प. लातूर से पधारे प्रमोद कुमार शास्त्रीजी ने तथा उनके सुपुत्र क्रांतीकुमार कावरे जी ने गीत एवं उपदेश के माध्यम से सभी का मार्गदर्शन करके सबका मन मोह लिया। इस अवसर पर आर्य समाज पश्रोत के सभी पदाधिकारियों ने समाज में सभी को धार्मिक सामाजिक तथा आत्मिक उन्नति के कार्यों में सहयोग देने का आह्वान किया।

सभा के मंत्री अशोक यादव ने आह्वान किया कि गांव-गांव में स्थापित आर्य समाज की आज प्रथम आवश्यकता होना चाहिए कि हमारे किसान भाई आत्महत्या न करें, इसलिए उनके परिवारों में जाकर उन्हें आत्मविश्वास दिलाये कि जब सुख के दिन कट गये तो दुख के भी दिन कट जायेंगे, उन्हें मदद करें व सभा की तरफ से उन्हें मदद दिलायें, तथा उनके परिवारों में ऐसी घटना हो गई है, उनके परिवार को सामाजिक व आर्थिक मदद दें, हिम्मत दें व अगर उनके युवा-युवती हैं, तो उनका निःशुल्क विवाह वैदिक रिति से अपने आर्य समाज में संपन्न कर सहयोग करें, अगर बच्चे छोटे हैं तो उन्हें गुरुकुल में निःशुल्क शिक्षण के लिए प्रेरित करें।

* * * * *

परमात्मा जीव (आत्मा) को हृदय रूपी गुफा में मिलता है।

— विद्यासागर शास्त्री

सुराज कॉलनी, प्लॉट नं. ४०, अमरावती.

ओ३म्! पूषा राजानमाघृणिरपगढं गुहा हितम्। अविन्दच्चित्र बर्हिषम्॥ ऋ० १/२३/१४॥ (आघृणिः) सब प्रकार से प्रकाशमय (पूषा) पुष्टिकारक, मार्गदर्शक भगवान् (अप+गूढम्) अत्यन्त गुप्त (गुहाहितम्) हृदय गुफा में रहनेवाले (चित्र बर्हिषम्) कमनीय आसनवाले (राजानम्) राजा आत्मा को (अविन्दत्) प्राप्त होता है।

अनेक लोग परमात्मा की खोज में लगे हैं। किन्तु परमात्मा की प्राप्ति नहीं होती। किसी विरले के भाग्य में यह कृत कृत्यता होती है। कहा भी है — अनेकजन्मसंविद्धस्ततो यातिपरां गतिम् = अनेक जन्म यत्न करने पर कहीं सफलता मिलती है, तब कहीं जाकर परा गति मिलती है। परमात्मा का मिलन ही परा गति है। पुरुषान्नपरं किञ्चित्साक्षात् सा परा गतिः। कठ० १।३।११॥ पूर्ण परमात्मा से परे कुछ नहीं है, वही सीमा है, वही परा गति है। प्रश्न—परमात्मा किसको मिलता है ? आत्मा को। कैसे आत्मा को ? जो अत्यन्त गूढ़ है, अत्यन्त गुप्त है। आत्मा तो सभी गुप्त होते हैं।

आज तक किसी को आँखों द्वारा आत्मा के दर्शन नहीं हुए। सामान्य जनों को तो आत्मा की सत्ता में ही सन्देह होता है। उन्हें तो आत्मा के होने का भी निश्चय नहीं होता। इसलिए सभी आत्मा अपगूढ़ हैं। अत्यन्त छिपे हुए हैं। यदि है तो।

आत्मा है किन्तु गुहाहित — हृदय गुफा में रहता है। सभी आत्मा हृदय गुफा में रहते हैं।

प्रश्न ? गुहाहित का विशेष अभिप्राय क्या है ?

उत्तर — जो आत्मा बहिर्मुख न हो, जिसकी विषयरति हट चुकी है। जो अपने अनुशीलन में लगकर अन्तर्मुख हो चुका हो अर्थात् जिसने चित्तवृत्ति का निरोध कर लिया है, वह गुहाहित = अन्तर्मुख है। अन्य आत्मा गुहाहित न होकर विषयहित होते हैं, बहिर्हित बहिर्मुख होते हैं। आत्मा में जिसे परमात्मा आ मिलता है, एक और गुण भी होना चाहिए।

वह क्या ?

आत्मा चित्रबर्हिः होना चाहिए। चित्रबर्हि क्या ? चित्र है आसन जिसका। आसन क्या ? हृदय को आसन कहते हैं। जिसका हृदय-आसन भगवान् के भावों से चित्रित हो चुका हो। जिस में और भाव उठने रुक चुके हों, वह चित्रबर्हि है।

एक बात और भी अपेक्षित है। आत्मा राजा होना चाहिए। किसका राजा ? अपनी इन्द्रियों और शरीर का। इस स्वामी हूँ, ये मेरे प्रयोजन के साधक हैं, तब यह राजा होता है। किन्तु परमात्मा को यह कैसे देख पायेगा, क्यों यह अंधेरी गुफा में रहता है।

परमात्मा आघृणि = सर्वतः प्रकाश मान है, अर्थात् परमात्मा स्वयं इसकी गुफा को प्रकाश से भर देंगे। परमात्मा पूषा है। स्थिकृत् है, मार्ग बताने वाले है। स्वयं मार्ग बता देंगे। एक बार सच्चे दिल से आत्मा परमात्मा को मिलना चाहे, परमात्मा स्वयं इससे आकर मिलेंगे। इतना ही नहीं अपितु वह कृपालु — उतो स महामिन्दुभिः षड्युक्तां — अनेसेषिधत् सुख युक्त षट् इन्द्रियों — आँख, नाक, कान, रसना (जिह्वा) त्वग्(त्वचा) और मन को — मेरे लिए मेरे अनुकूल चलाता है। इस से अधिक क्या चाहिए ?

* * * * *

जिन्दगी - एक अनोखा सफर

- अन्जना दीवान (इन्डोनेशिया)

जिन्दगी का सफर, है यह कैसा सफर, कोई समझा नहीं, कोई जाना नहीं

आज कोई बिरला ही होगा जो जीवन के सफर को जानने और समझने की कोशिश करता है! प्राचीन काल में अधिकतर लोग जीवन के मूल्यों को जानते थे और समझते भी थे लेकिन आज २१वीं शताब्दी में भौतिकवाद की चमक-दमक में जीवन के मूल्य कहीं बिखर गए हैं। बिरला ही कोई होगा जो मनुष्य जीवन के लक्ष्य को जानता हो। अधिकतर सब लोग शरीर को ही नित्य (जन्म-मरण से रहित) मानकर ऐसे जी रहे हैं जैसे इस संसार से जाना ही नहीं है और चीजों का संग्रह तो ऐसे कर रहे हैं जैसे सदैव के लिए यहीं रहना है।

कौन है जो यजुर्वेद के इस मन्त्र को जानता है - कः अस्मिः अर्थात् मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, मेरा लक्ष्य क्या है? क्या मेरा लक्ष्य खाना-पीना, आराम करना और सोना आदि ही है? क्या मेरा लक्ष्य ब्रह्म प्राप्ति नहीं है? क्या मेरा लक्ष्य स्वाध्याय (स्वयं का अध्ययन) करना नहीं है जो माता के गर्भ से छुटकारा पाने के लिए मैंने ईश्वर से वादा किया था? कौन है जो इन सब प्रश्नों का उत्तर दे सके?

सृष्टि रचयिता ईश्वर स्वयं ही इन सब प्रश्नों का उत्तर दे रहा है कि जैसे हम अपना घर बनाते हैं और कहते हैं यह मेरा घर है, उसी प्रकार ईश्वर भी कह रहा है इस सृष्टि का रचयिता मैं हूँ और हे जीव! तू मेरे काव्य वेद को जान। पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति।

यह वेद की वाणी अमर है, न कभी मरती है ना कभी उत्पन्न होती है। यह वेदवाणी भी मेरी (ईश्वर) की तरह कण-कण में है। हे जीव! तेरे अन्दर भी है और मनुष्य जन्म तुझे इसी वाणी को प्राप्त करने के लिए मिला है। जीवन के सफर में हमें इसी वाणी की कामना करनी चाहिए।

अब प्रश्न यह है कि कौन है जो जीवन के सफर में हमें वाणी का-

वाचस्पतिर्वाचम् नः स्वदतु

स्वाद चखाए? वेदवाणी का यह मन्त्र ओ३म् अग्न आ याहि वीतये गृणानो.... तथा अन्य मन्त्रों में कहा कि जिज्ञासु दूर से, पास से विद्वानों के निवास स्थान पर जाएँ, उनके साथ बैठ कर यज्ञ करें और यज्ञ में ही यह विद्वान् जन दुःख-सुख, नित्य-अनित्य, आनात्मा, पवित्र-अपवित्र सभी का ज्ञान देते हैं ताकि हम जीवन के सफर में कहीं डगमगा ना जाएँ।

यह विद्वान् जन हमें यह उपदेश देते हैं कि- एक सद्विप्रा बहुधा वदन्ति वह निराकार, सर्वव्यापक ईश्वर एक है और विद्वान् जन उसके गुणों के आधार पर उसे कई नामों से पुकारते हैं। इसलिए ऐ जीव! जिन्दगी के सफर में तू सिर्फ एक निराकार ईश्वर की उपासना कर, जगह-जगह मत्था मत टेक।

दूसरा विद्वान् जन सदैव यह कहते हैं। यज्ञं कुरु, यज्ञं कुरु। वह निराकार ईश्वर यज्ञ में ही प्रकट होता है। इसलिए जीवन के सफर में उस सृष्टि रचयिता निराकार, चेतन ईश्वर की सदैव नित्य सुबह-शाम अग्निहोत्र/यज्ञ से ही उपासना करें वेदों में जड़ तत्त्व की पूजा का विधान नहीं है। यह कर्म का पुण्य मृत्यु के पश्चात् भी जीव के साथ जाता है इसलिए यज्ञ सबसे श्रेष्ठ कर्म है।

तीसरा विद्वान् जन यह कहते हैं कि ऐ जीव! जीवन के सफर में तू मन की बुराइयाँ-काम क्रोध, अहंकार, राग-द्वेष, नफरत इत्यादि पर संयम करके मन और बुद्धि को शुद्ध कर। इसके लिए नित्य सुबह उषाकाल में ईश्वर के नाम स्मरण कर, योगाभ्यास, आसन-प्राणायाम, हवन कर और विशेष उपदेश यह है कि तू वैदिक गुरु की दी हुई विद्या को आवरण में ला, इसी से तेरा चंचल मन और बुद्धि संयम में होंगे और शुभ कार्य करने लगेंगे।

चौथा, विद्वान् जन यह कहते हैं, हे जीव! तू अपने आप को पहचान, जिस शरीर पर तू गर्व करता है, वह जड़ है। इस शरीर के अन्दर दोष क्षी हैं— जीवात्मा और परमात्मा। जीवात्मा के कारण ही आँख देख सकती हैं, कान सुन सकते हैं, शरीर के विभिन्न विभिन्न कार्य कर पाते हैं और परमात्मा है, हर कर्म को देख रहा है और, कर्म अनुसार ही हर जीव को सुख और दुःख देता है। इसलिए हे जीव! जीवन के सफर में स्वयं की पहचान करने के मार्ग की खोज कर अन्यथा विभिन्न योनियों के चक्कर से कभी नहीं निकल पाएगा।

पाँचवा, वेदवाणी यह कहती है कि विद्वानों से ऐसे प्यार करो जैसे हम ईश्वर से प्यार करते हैं। यह विद्वान् वेद माता के पुत्र हैं और वेद इनके राम-रोम में है। निराकार ईश्वर विद्वानों के मुख से ही यह वेदवाणी बुलवाता है। जैसे पूरे विश्व को हवा-पानी, सूर्य-चन्द्रमा इत्यादि की जरूरत है उसी प्रकार पूरे विश्व को वेद के विद्वानों की जरूरत है सुख-शान्ति के लिए, अज्ञान के अन्धकार को दूर करने के लिए और अपनी संस्कृति की जड़ों को मजबूत करने के लिए। आखिर में यही कहना चाहूँगी कि जिन्दगी का सफर आज अनोखा इसलिए लगता, है क्योंकि हमने वेद के विद्वानों का संग छोड़ दिया है। यह योगी-विद्वान् जन सिर्फ एक नहीं, अनेक जन्मों में उतारे (अष्टांग योग) तप करके ब्रह्म की प्राप्ति करते हैं। यजुर्वेद मन्त्र में कहा यह योगी जन ईश्वर की ज्योति में हर्षित और मग्न होते हुए साधारण जन को भी ईश्वरीय वाणी वेद और यज्ञ से ओत-प्रोत करते हैं और जीवन के ध्येय की समझने की प्रेरणा देते हैं जिसके लिए मनुष्य जन्म हुआ है। कितनी अजीब बात है कि आज हम विज्ञान, गणित, कम्प्यूटर आदि सबका अध्ययन तो कर रहे हैं लेकिन स्वयं को जानने की कोशिश नहीं कर रहे हैं। बाकि विषयों की तरह स्वयं का अध्ययन करना भी बहुत ही जरूरी है। यही मार्ग ही हमें ज्ञान-अज्ञान, विद्या-अविद्या, गलत-सही की पहचान कराएगा और विद्वानों के संग से जोड़ेगा, निराकार ईश्वर की पहचान कराएगा और मोक्ष की तरफ ले जाएगा। सही मायने में यही जीवन के सफर का लक्ष्य होना चाहिए।

संपादक के विचार

अन्जना बेटी ने अपने इस सुन्दर लेख में वैदिक मार्ग पर चलकर जीवन का रहस्य, लक्ष्य आदि गम्भीर विषयों को समझाने का प्रयास किया है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि वर्तमान में मनुष्य भौतिकवाद, जिसमें विज्ञान, धन, दौलत, परमाणु-शक्ति, काम-क्रोध आदि अनेक तत्त्वों की उन्नति सम्मिलित है, में मग्न होकर इस अमूल्य मनुष्य जीवन के लक्ष्य को भुला बैठा है।

क्या हम इस सत्य को नहीं जानते कि इस दुनिया के प्रत्येक पदार्थ की कीमत लगाई जा सकती है परन्तु मानव जीवन की कीमत आँकना पूर्ण रूप से असम्भव है, यह एक अमूल्य निधि है जो जीवात्मा को परमात्मा ने अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष सिद्ध करने के लिए दी है।

वेदों में अनेक बहुमूल्य शिक्षाएँ हैं। जिसमें से कुछ एक ये हैं कि माता-पिता, वृद्धों, वैदिक गुरुजनों की सेवा इत्यादि से लेकर मानवता से प्रेम, भाईचारा, राष्ट्र को सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न, अहिंसा को प्रतिष्ठित करना और सर्वोत्तम गुणों को धारण करना जैसे की प्रत्येक मनुष्य के मन में शिष्टाचार, सबके लिए राग-द्वेष से हटकर कल्याणकारी विचार, मातृ ऋण, पितृ ऋण, वनों का ऋण चुकाना और सदा परोपकार ही करने का यत्न करना आदि के उपदेश दिए हैं। माता-पिता आदि का ऋण उनकी सेवा करके चुकाना जाता है, ऋषि ऋण उनके बताए मार्ग पर चलकर, उनकी लिखी पुस्तकों का अध्ययन करने से चुकाया जाता है और वनों का ऋण, वन न कटें, वनों की रक्षा हो, ऐसा करके चुकाया जाता है। इन उपदेशों को हम जीवन में धारण करके ही इस अमूल्य जीवन का शायद कुछ एक मूल्य अंदा कर सकते हैं।

पुनः वेदों ने हमें समझाया कि अकेली भौतिकवाद की उन्नति मानवता के लिए घातक है। इस उन्नति में भ्रष्टाचार, व्यभिचार, विषय-विकार आदि कोई बुराई ना आए, इसलिए भौतिकवाद के साथ-साथ आध्यात्मिकवाद

की भी उन्नति परमावश्यक है, क्योंकि आध्यात्मिकवाद भौतिकवाद में आई उक्त कई बुराइयों को नष्ट कर देता है और मानव जीवन में अमृत, शांति, सुख और और अन्त में मानव जीवन का जो लक्ष्य मोक्ष पाता है, वहाँ तक पहुँचा देता है। आज केवल इस भौतिकवाद के चक्कर में फँसकर इन्सान जीव-ब्रह्म, प्रकृति, प्रकृति से रचा यह सारा संसार आदि समझने में प्रायः विफल रहा है।

कः असि का अर्थ ही यही है कि मैं कोन हूँ? अतः जीवात्मा षड् शरीर की सहायता से पिछले युगों की भान्ति वेद मार्ग पर चलकर यज्ञ, योगाभ्यास आदि करके स्वयं को और इसी जीवात्मा के अन्दर निवास करने वाले परमेश्वर को जाने, यही मनुष्य शरीर को पाने का लक्ष्य है क्योंकि जीवात्मा केवल मनुष्य शरीर से ही साधना कर सकता है।

पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि वेद नहीं सुन सकते, यज्ञ, अग्निहोत्र, आसन, प्राणायाम आदि नहीं कर सकते। अतः जीवात्मा वैदिक साधना करके इस शरीर से लाभ ले और यदि कहीं चूक हो गई तो अगला शरीर पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि योनि का ही मिलेगा जो अज्ञान रूप अंधकार से परिपूर्ण होगा और जिसमें ईश्वर भक्ति करने का कोई भी साधन नहीं होगा। ये सब उपदेश ईश्वर ने वेद वाणी में स्वयं दिया है। इसलिए हम ईश्वर के इस अमर काव्य (वेद वाणी) का अध्ययन करें। इस वाणी का सुनना ही तप है और जैसा अन्जना बेटी ने लेख में लिखा और वेदों में भी समझाया कि यह वेद वाणी केवल एक वेद एवं अष्टांग योग विद्या का ज्ञाता विद्वान् ही यज्ञ में सुनाता है।

जीवन में करोड़ों यज्ञ भी हों तब भी यह अनन्त ज्ञान से परिपूर्ण वेद वाणी, इतनी सुनने पर भी पूर्ण नहीं होती, इसके अध्ययन, मनन, चिन्तन, श्रवण आदि की इच्छा बनी रहती है। यह ईश्वर का दिया लाभकारी अनन्त ज्ञान है।

ऋग्वेद में ईश्वर ने कहा कि हे मनुष्यों! तुम मेरी उपासना/पूजा के बिना मुझे नहीं जान सकते, मैं (ईश्वर) वेदों के बिना नहीं जाना जा सकता और अन्त में कहा कि वेद के विद्वान् के बिना तुम वेद को नहीं जान सकते, इसलिए मुझे जानने के लिए विद्वानों की शरण प्राप्त करो। जिन्दगी का सफर अनोखा ही है। सांख्य शास्त्र कहता है- **कर्मवैचित्र्यात् सृष्टिवैचित्र्यम्** अर्थात् मनुष्यों द्वारा किए कर्म विचित्र होने के कारण सृष्टि विचित्र लगती है। जिंदगी और ईश्वर द्वारा रचित यह सृष्टि और जीवन का सफर अनोखा प्रतीत होता है। यदि हम विद्वानों से वेद सुन-सुनकर कर्म के स्वरूप और सृष्टि रचना के स्वरूप को जान लें तब तो केवल शुभ एवं पुण्यवान् कर्म करके मनुष्य इस सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ का सुख भोगता हुआ ईश्वर को प्राप्त कर लेता है और उसके लिए कुछ भी विचित्र नहीं रहता अपितु सुखकारी बन।

* * * * *

स्वाङ्कृतोऽसि विश्वेभ्यः ऽ इन्द्रियेभ्यो दिव्येभ्यः पार्थिवेभ्यो मनस्त्वाष्टु स्वाहा।

त्वा सुभवं सूर्याय देवेभ्यस्त्वा मरीचिपेभ्यः ऽ उदानाय त्वा॥ यजुर्वेद ७.६॥

पदार्थः- हे (सुभव) शोभन ऐश्वर्ययुक्त योगी! तू (स्वाङ्कृतः) अनादि काल से स्वयंसिद्ध (असि) है, मैं ((इन्द्रियेभ्यः) कार्यों की अत्यन्त साधक इन्द्रियों से तथा) (दिव्येभ्यः) शुद्ध (विश्वेभ्यः) समस्त (देवेभ्यः) प्रशस्त गुण और प्रशंसनीय पदार्थों से युक्त विद्वानों और (मरीचिवेभ्यः) योग के प्रकाश से युक्त व्यवहारों से (त्वा) तुझको स्वीकार करता हूँ, जिससे (त्वा)तुझे, योग चाहनेवाले को (मनः) योगसमाधियुक्त मन और (स्वाहा) सत्यानुष्ठान करने की क्रिया (अष्टु) प्राप्त हो।

भावार्थः- मनुष्य जबतक श्रेष्ठाचार करनेवाला वहीं होता, तबतक ईश्वर भी उसको स्वीकार नहीं करता। जब तक उस कोईश्वर स्वीकार नहीं करता है, तबतक उसका आत्मबल पूरा-२ नहीं हो सकता, और जब तक आत्मबल नहीं बढ़ता, तबतक उसको अत्यन्त सुख भी नहीं होता॥

मनुष्य के छः शत्रु कौन ?

— विद्यासागर शास्त्री

सुराज कॉलनी, प्लॉट नं. ४०, अमरावती.

कुत्ते की आदत छोड़ो जहिश्चयातुम्

वेद मन्त्र में यह तीसरी बात कहीं गई है कि कुत्ते की (आदत) छोड़ देनी चाहिए। कुत्ते की चाल से अभिप्राय है - स्वजाति द्रोह करना, चाटु कारिता की प्रवृत्ति - लोभ की प्रवृत्ति आदि। अथर्ववेद का यह मन्त्र उपदेश देता है कि हे जीवात्मा ! तू अब कुत्तापन कब तक करता रहेगा ? कुत्ते की तरह आपस में लड़ना और परायें के सामने दुम हिलाना अथवा कुत्ता जैसे अपनी की हुई उल्टी को भी चाट लेता है वैसे ही व्रत करके, प्रतिज्ञा करके वचन देकर त्यागो हुई बुरी आदत को दुबारा ग्रहण करना इस प्रकार की पशुताएं तू कब तक करता रहेगा। आज भाई भाई से ईर्ष्या करके कुत्ते की आदत का परिचय दे रहा है। पारस्परिक फूट, पारस्परिक ईर्ष्या एक दूसरे की हानि करना कुत्तापन नहीं तो और क्या है क्या कहेंगे। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमरग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के ११ वे समुल्लास में लिखा है - ऐसे शिरोमणि देश को महाभारत के युद्ध ने ऐसा धक्का दिया कि अब तक भी यह अपनी पूर्व दशा में नहीं आया क्योंकि भाई को भाई मारने लगे तब नाश में क्या सन्देह ? विनाशकाले विपरीत बुद्धि: जब नाश होने का समय निकट आता है, तब बुद्धि भी उल्टी हो जाती है और मनुष्य उल्टे काम करते हैं। कोई उनको समझावे तो उसको सीधे माने, जब बड़े बड़े विद्वान् राजा महाराजा, ऋषि महर्षि लोग महाभारत के युद्ध में मारे गये तब विद्या और तब वेदोका धर्म का प्रचार नष्ट होने लगा। ईर्ष्या, द्वेष, अभिमान आपस में करने लगे। जो बलवान हुआ वह देश को दाब कर राजा बन बैठा वैसे ही सर्वत्र आर्यावर्त देश में खण्ड खण्ड राज्य हो गया। तब द्वीप द्वीपान्तर के राज्य की व्यवस्था कौन करे ?

दुर्योधन को इस प्रकार की कुत्ते की चाल न छोड़ने के कारण ही महर्षि ने उसे - नीच गोत्र हत्यारा लिखा है।

बच्चों की संस्कृत की पाठ्य पुस्तक में चित्रांग सारमेय (कुत्ता) की कहानी लिखी है जिसके बहाने समझाया गया है कि स्वजाति स्व परिवार, स्वराष्ट्र के लोगों को लड़ाना, भिड़ाना, ईर्ष्या, द्वेष, चुगली करना आदि कुत्तों जैसा आचरण है। इसे छोड़ देना ही श्रेयस्कर है। चित्रांग नाम का कुत्ता अपने साथी स्वदेशी कुत्तों से दुःखी होकर कहने लगा - मैं तुम्हारे व्यवहार से दुःखी हूँ। मैं विदेश में जाकर रहूँगा। वह विदेश चला गया। वहाँ उसे घूमते फिरते भोजन आदि खूब खाने को मिल जाता था किन्तु ज्यों ही वह खा-पीकर घरों से बाहर निकलता तो दूसरे कुत्ते उसको मार पीटकर घायल कर देते थे। वह कुछ दिन में ही इस पिरणाम पर पहुँचा कि अपना देश ठीक है। वहाँ भूखे प्यासे आराम से तो रहेंगे। वह स्वदेश वापिस आ गया तो अन्य स्वजाति के कुत्तों ने पूछा-चित्रांग हमें विदेश का हाल तो सुनाओ। तब चित्रांग ने कहा - भोजनानि सुभिक्षाणि शिथिलाः पौर योषितः विदेशस्तु एक दोष स्वजाति एवं विरुध्यते अर्थात् स्वजाति के लोग विरोध करते हैं। यह कुत्तों का जन्मजात स्वभाव होता है।

अब अपने ही राष्ट्र को देखिए - लोग अपने ही देश की हिन्दी भाषा का, संस्कृत का, जिन्होंने यह देश बसाया उन आर्यों का अपनी संस्कृत व सभ्यता का वेदज्ञान का वैदिक सिद्धान्तों का अपनी वेशभूषा का शताब्दियों ही नहीं भारत के गुलाम होने से पहले तक जो गोधन यहाँ की आर्थिक व कृषि व्यवस्था का आधार था उसका विरोध करने में, उसे न अपनाने में गौरव अनुभव करते हैं। तो फिर कैसे राष्ट्रीयता की भावना पैदा की जा सकती है। क्या यह कुत्तापन नहीं है। हम विदेशों की मोहर लगे बिना किसी बात को मानने ही नहीं। आर्यों ने कहा व्यायाम करो। आसन प्राणायाम करो, प्राकृतिक व आयुर्वेदिक चिकित्सा करो लेकिन लोगों ने नही माना, जब विदेशी सभ्यता के लोगों ने इन्हीं योग आसन को टी.वी. चैनलों पर दिखाना प्रारम्भ किया तब यहाँ योग के नाम पर दुकानें खुल गईं।

आर्यों ने कहा तख्त पर सोने से रीढ़ की हड्डी सीधी रहती है कमर का दर्द नहीं होता। लोगों ने नहीं माना जब

विदेशियों ने टी.वी. पर प्रचार शुरू कर दिया तब माना।

आज घर घर में डबल बैड पड़े हैं यदि गद्दा हटा दिया जाए तो सनमाइका लगे हुए तख्त ही है।

महर्षि दयानन्द ने सन १८७४-७५ में ही स्वदेशी आन्दोलन का सूत्रपात करते हुए सत्यार्थ प्रकाश में लिखा— देखों अपने देश के बने जूतों का भी जितना मान सम्मान करते हैं। उतना भी अन्य देशस्थ मनुष्यों का नहीं करते। देखो कुछ सौ वर्ष से ऊपर इस देश में आये हुए, यूरोपियनों को हुए और आज तक ने लोग मोटे कपड़े पहनते हैं जैसा कि स्वदेश में पहनते थे, परन्तु अपने देश का चलन नहीं छोड़ा और तुममें से बहुत से लोगों ने उनका अनुकरण किया। इसी से तुम निर्बुद्धि और वे बुद्धिमान ठहरते हैं।

सन् १९६० में एशियाई देशों की एक क्रीडा प्रतियोगिता भारत में हुई थी तब भारत के प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू थे। विदेशी खिलाड़ियों की वापसी पर नेहरूजी ने उनसे पूछा कि उन्हें भारत में कोई कष्ट तो नहीं हुआ। तब जापानी खिलाड़ी बोले — आप बुरा न माने तो सच कह दें। एक कष्ट जरूर हुआ, दिल्ली के बजारों में अधिकतर नाम पट्ट अंग्रेजी में दिखाई दिये। हिन्दी के नामपट्ट बड़ी कठिनाई से कोई एकाध दिखाई दिया।

वास्तव में जो देश अपनी भाषा से प्यार नहीं करता, वह अपनी स्वाधीनता व राष्ट्रीयता को क्या प्यार करेगा? एक अन्य उदाहरण सुनिए — अपनी भाषा की जगह विदेशी भाषा अंग्रेजी के कारण सब से बड़ा तमाचा रूसी नेता स्टालिन ने मारा था। भारत के स्वाधीन होते ही विजयालक्ष्मी पण्डित रूस में राजदूत नियुक्त हो गईं। वह रूस के डिक्टेटर शासक स्टालिन से मिलने गईं तब उसने अपना परिचय पत्र अंग्रेजी में प्रस्तुत किया। स्टालिन ने अंग्रेजी में लिखा परिचय-पत्र देखा तो उनका चेहरा क्रोध से तमतमा गया। उन्होंने झिड़की दी या तो अपने देश की भाषा हिन्दी या संस्कृत में प्रस्तुत करना था या हमारी रूसी भाषा में। यह साम्राज्यवादी देश की भाषा अंग्रेजी हमारे बीच में कहाँ से आ टपकी। इसी अंग्रेजी के कारण — विजयालक्ष्मी पण्डित को अपमानित होना पड़ा। स्टालिन ने भी भारत की मानसिक गुलामी पर भी जैसे जोरदार तमाचा जड़कर हमें भाषा के मामले में स्वाधीन होने की चेतावनी दी। महर्षि दयानन्द की मातृभाषा गुजराती थी। पठन पाठन की भाषा संस्कृत थी फिर भी अपने सारे छोटे बड़े ग्रन्थ हिन्दी भाषा में लिखे और आर्य समाज के साप्ताहिक प्रवचनों की भाषा हिन्दी निश्चित की तथा स्वदेशी वस्त्र पहनना लाहौर आर्य समाज के समय से बहुत पहले ही निश्चित हो चुका था। महर्षि ने हिन्दी को राजकीय कार्यों में प्रचलित करने के लिए अंग्रेज अकिधरियों को आर्यसमाजों व नागरिकों की तरफ से अपने जीवन में २०० विज्ञापन भिजवाएँ रियासतों के राजाओंको भी हिन्दी और स्वदेशी की प्रेरणा दी।

कुत्ते का एक स्वभाव होता है चाटुकारिता। आप उसे रोटी डाल दे या पालतू कुत्ता बनाले। वह बोलकर तो बता नहीं सकता, आप से लाड प्यार करेगा, झुलना-मिलना चाहेगा। हमने कुत्ते के इस दोष को हम ने चाटुकारिता का नाम दिया। वेदमन्त्र कहता है मनुष्यों को इस दोष से बचना चाहिए।

विद्यायको, सांसदों, मन्त्रियों, मुख्यमन्त्रियों यहाँ तक की राष्ट्रपति, और प्रधानमंत्री तक भी इस चाटुकारिता के द्वारा सच्चाई से दूर कर दिए जाते हैं।

वर्तमान में इस समाज व राष्ट्र में अधिक पनप रही है। भूत पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह अधिक योग्य अधिक उपयुक्त न होते हुए भी श्रीमती इन्दिरा गांधी की चाटुकारिता करके सर्वोच्च पद पर आसीन हो गये। उन्होंने एक बार इन्दिरा गांधी की चाटुकारिता में कहा था — तुमको खुदा कहूँ कि खुदा को खुदा कहूँ। दोनों की सूरत एक है किसको खुदा कहूँ।

वाणी के चार दोष होते हैं जिनसे वाणी दूषित हो जाती है और मनुष्य कुत्तापन से मुक्त नहीं हो पाता। प्रथम— कठोर वचन, द्वितीय—झूठ बोलना, तृतीय—सब प्रकार की चुगली, चतुर्थ—व्यर्थ की बातचीत या बकवास करना ये

प्रसिद्ध दोष हैं। जब व्यक्ति इन दोषों के कारण वाणी का दुरुपयोग करता है तब अनेक व्यक्ति यह कहते हुए सुने जा सकते हैं- बकने दो, कुत्ते ऐसेही भौंका करते हैं।

महर्षि मनु ने लिखा है -

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यं अप्रियम् न चल अनृतं ब्रूयात् एष धर्मः सनातनः॥

प्रिय वाक्य प्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः।

तस्मात् तदेव वक्तव्यम्, वचने का दरिद्रता॥

एवकं प्रसूयते माता द्वितीयम् वाक् प्रसूयते।

वाक् जातम् अधिकं प्रोचू सौदर्यात् अपि बांधवात्॥

कुत्ते की चाल छोड़ने के लिए हमे अपनी वाणी का बड़ी सावधानी के साथ सोच समझकर प्रयोग करना चाहिए। एक राजा कटु बोलता था। प्रत्येक नागरिक के साथ उसका गाली गलौच का अभद्र अप्रिय व्यवहार था। एक दिन किसी प्रकार उसे विचार आया कि प्रजा का एक विशेष उत्सव करना चाहिए और उसमें जो सबसे अच्छी, सब से उत्तम वस्तु लाये तथा जो सब से अपवित्र, सब से गन्दी वस्तु लेकर आये उसको पारितोषिक भी देना चाहिए। अपने मन्त्री से विचार विमर्श करने के बाद राजा की तरफ से उत्सव की तिथि घोषणा कर दी गई। मन्त्री ने राजा को वाणी का महत्त्व समझाने के लिए अच्छा अवसर मिल गया और एक व्यक्ति को इसके लिए तैयार भी कर लिया गया।

उत्सव में दो पंक्तियां बनवा दी गई। राजा व मन्त्री दोनों इकट्ठे निरीक्षण करने में लग गये। सब से अच्छी वस्तुओं की पंक्तिमें कोई लड्डू, पूरी, खीर, हलवा, पकौड़े, रसगुल्ले, गुलाब जामुन आदि अच्छी-अच्छी खाने लायक चीजें लिए खड़े थे। उसी पंक्ति में सबसे पीछे एक व्यक्ति खड़ा था जो किसी कारीगर से प्लास्टिक की जीभ बनवाकर लाया था। राजा व मन्त्री इस अच्छी वस्तुओं की पंक्ति का निरीक्षण करने के बाद बुरी वस्तुओं वाली पंक्ति का निरीक्षण करने लगे। वहां भी कोई कीचड़ गोबर, मरी हुई चुहियां, छिपकली, मरा हुआ सांप, सुअर आदि लिए खड़े थे। उस पंक्ति में भी वही व्यक्ति सबसे पीछे बनावटी मनुष्य की जीभ लिये खड़ा था। राजा व मन्त्री ने पूछा- क्यों भाई, यह जीभ अच्छी भी बुरी - बुरी भी तब उसने कहा - महाराज यदि मनुष्य इस जीभ से अपनी वाणी से प्रिय बोलता है तो उस से उत्तम कोई वस्तु नहीं है। यह शत्रु को भी मित्र बना देती है। और यदि इस वाणी से जीभ से मनुष्य कटु बोलता है, अपशब्द बोलता है, चुगली करता है, चाटुकारिता करता है। बकवास करता है तो यह वाणीमित्र को भी शत्रु बना देती है। बन्दूक की गोली का घाव भर सकता है किन्तु वाणी का घाव अर्थात् कठोर शब्द का घाव नहीं भरता इसलिए इससे बुरी वस्तु भी और क्या हो सकती है। यह विचार सुनकर राजा का हृदय परिवर्तन हो गया और वह वाणी का सदुपयोग करने लगा। सन्ध्या के मन्त्रों में ओं वाक् वाक् कहते हैं हम परमात्मा से वाणी की पवित्रता बनाए रखने की प्रार्थना करते हैं और वाणी में परमात्मा की सामर्थ्य का अनुभव करते हैं।

* * * * *

ऋषि दयानन्द ने कहा था .

विद्वान् एकमत हो प्रीति से वर्ते

यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं, वे पक्षपात छोड़, सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो-जो बातें सबके अनुकूल सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक-दूसरे के विरुद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्ते-वर्तावे तो जगत् का पूर्ण हित होवे। क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों (साधारण जनों) में विरोध बढ़कर अनेकविध दुःख की वृद्धि और सुख की हानि होती है।

समस्त आयु के लिए है - आयुर्वेद

प्रधानमंत्री मोदी जी ने आयुर्वेद का चिकित्सालय यहां की जनता को देकर बहुत सराहनीय कार्य किया है। यह चिकित्सालय अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान अर्थात (AIIMS) एम्स जैसा है और यह भी कहा कि प्रत्येक जिले में आयुर्वेद का बड़ा चिकित्सालय खोला जायेगा। यह और भी अच्छा कार्य है। जनता को आज आयुर्वेद की आवश्यकता भी है। दिल्ली में यह बड़ी उपलब्धि है।

आयुर्वेद केवल रोग अर्थात् रोगी के लिए ही नहीं अपितु इसमें समस्त आयु का ज्ञान है जन्म से मृत्यु परन्तु और जन्म से पूर्व गर्भस्थिति का पूरा विज्ञान आयुर्वेद में दिया है। आयुर्वेद चिकित्सा ऐसी है कि जिसमें जीवन से सम्बन्धित सभी कुछ है आयुर्वेद का उद्देश्य है -

स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम्, आतुरस्स्य रोग प्रशमनं च।

अर्थात् - जब तक व्यक्ति स्वस्थ है। उसके स्वास्थ्य की रक्षा करना और अस्वस्थ होने पर उसके विकार को दूर करना।

रोगी कैसे स्वस्थ रहे उसका आहार विहार कैसा हो किस प्रकृति के व्यक्ति को ऋतु अनुसार कैसा आहार लेना उचित है उसका ऋतु के अनुसार व देश काल के अनुसार रोग के अनुसार क्या आहार विहार हो कैसा परिधान हो निवास कैसा हो अर्थात् जिसे स्वस्थ व्रत कहते हैं उसका सम्यक् ज्ञान है। व्यथकत की दिनचर्या कैसी हो बालक युवा वृद्ध का समयानुसार ऋतु देश कालानुसार क्या करना योग्य है क्या न करना योग्य है आदि सभी विषयों पर विस्त्रुत प्रकाश है।

आयुर्वेद में काप व शल्य दो प्रकार की चिकित्सा हैं। काप में काष्ठ व रसौषधि तथा शल्य में चीर-फाड़ अर्थात् शल्य कर्म द्वारा चिकित्सा है। इस चिकित्सा में महत्व पूर्ण कर्म शरीर (सिस्टम) का शोधन करना है। जिसमें रोगी का रोगानुसार विभिन्न औषधि विधि व कर्म द्वारा स्नेहन स्वेदन तथा वस्ति वमन विरेचन द्वारा दोषों को शरीर से ढीला कर बाहर निकालना होता है। इनमें स्नेह अर्थात् घृत तैल वसा आदि द्वारा शरीर का अभ्यंग आदि से स्नेहन करना होता है। पश्चात् विभिन्न क्रियाओं द्वारा कुटी स्वेद जेन्ताक स्वेद को वनस्पति व औषधियों से करना होता है। कफ रोगों का नमन वात रोगों का विरेचन व शिरोरोगों का नस्य द्वारा प्रतिकार करते हैं। इस क्रिया को पञ्च कर्म कहते हैं। इससे शरीर से दोषों का निर्हरण कर शुद्धि की जाती है पश्चात् वातादि दोषों के बल व रोगी के बल को देखते हुए औषधि की व्यवस्था की जाती है।

आयुर्वेद आयु का वेद है ऋग्वेद का उपवेद है ऐसी चिकित्सा संसार में अन्य नहीं करते कि यह शरीर की प्रकृति से मेल खाती है। शरीर के साथ सात्म्य है प्राकृतिक है मनुष्य भी प्राकृतिक प्राणी है। आज कल हम प्रकृति से ज्यों ज्यों दूर जा रहे हैं त्यों त्यों नए नए रोगों को जन्म दे रहे हैं हमारी दिनचर्या ही विकृत हो रही है। भोजन परिधान, श्रृंगार के साधन, निवास, सब प्रकृति के अनुरूप न हो कर कृत्रिम हो चुके हैं। वायु, जल, प्रदा, शाक, फल, अन्न सब दूषित हो चुके हैं। नदियों का जल पीने की बात तो अलग स्नान की बात भी छोड़े, छूने योग्य भी नहीं रहा उनमें कारखानों व नगरों का कचरा मलवा इतना पड़ता है कि, उस पानी में दुर्गन्ध आती है। भयानक गैसें नदियों के पानी से निकल वातावरण को भी दुर्गन्धित कर रही हैं। ऐसे में कृषि की भूमि कैसे सुरक्षित रह सकती है। इसीलिए हमारे समाज में नगर, नदी, वायु व फल शाक में प्रदूषण द्वारा हानिकारक रोग फैल रहे हैं। ऐसे में शरीर की जीवनी शक्ति का क्षय हो रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। जिससे थोड़ी सी भी विकृति से रोगों का जन्म हो जाता है। इसीलिए कभी श्वाइन फ्लू, कभी डेंग, कभी चिकन गुनिया तो कभी जापानी इन्सिफेलाइटिस आदि रोग जनता में फैलने लगते हैं और आधुनिक रासायनिक औषधियां लाभ पहुँचाने के अतिरिक्त और भी विषाक्तता (टॉक्सिसिटी) फैलाती हैं तथा

रोगी के पाचन तन्त्र, यकृत, हृदय, पेन्क्रियाज सम्बन्धी मष्तिष्क, त्वचा, उत्सर्जन सम्बन्धी विकार बन जाते हैं। महानगरों में कोलाहल व अन्य प्रदूषणों से हृदय फेफड़ों त्वचा नेत्र कर्ण आदि के रोग हो तो हैं और जीवन भर औषधियां लेनी पड़ती हैं।

आयुर्वेद के महत्व को अब विश्व समझ रहा है। जैसा कि योगाभ्यास आज जर्मन, फ्रान्स, अमेरिका, रूस, चीन आदि विश्व के समस्त देशों में पहुँच चुका है। पाश्चात्य जीवन व्यतीत करने वाले स्त्री-पुरुष एवं विश्वविद्यालय के विद्यार्थी भी आज योग का महत्व समझ चुके हैं और योगाभ्यास से लाभ उठा जीवन का सच्चा सुख अर्जित कर रहे हैं। योग व योगाभ्यास जीवन के लिए एवं शारीरिक व आत्मिक उन्नति हेतु अत्यावश्यक हो गया है। प्रकृति के साथ चल कर हम अपने जीवन को सुखी व उन्नत बना सकते हैं।

आयुर्वेद की परिभाषा अन्यों से कहीं आगे है - विस्त्रत है -

समदोषः समान्निश्च समधातु मलक्रिया।

प्रसन्नात्मेन्द्रिय मनः स्वस्थ इत्पभि धीयते॥

अर्थात् भोजन का पाचन उत्सर्जन मल क्रिया रस रक्त मांस मेद आदि धातुओं का निर्माण शरीर में एन्जाइम हार्मोन्स की क्रिया व वृद्धि आदि क्रियाओं का सम्यक होना ही स्वास्थ्य नहीं कहा जाता अपितु जब मन आत्मा व इन्द्रियां भी प्रसन्न चित्र हों बुद्धि भी ठीक कार्य करे ऐसा व्यक्ति ही स्वस्थ कहा जा सकता है।

इन सभी बातों को देखते हुए आयुर्वेद सर्वाधिक उपयोगी है। ईश्वर ने धरती पर जो कुछ भी पृथ्वी समुन्द्र आकाश वायु, जल, सूर्य चन्द्रमा का प्रकाश वनौषधियां आदि सब कुछ तो हमें दिया है। ऐसा कोई द्रव्य नहीं जो औषधि व जीवन के लिए आवश्यक न हो। चारों ओर का प्राकृतिक वातावरण व्रक्ष लता पर्वत नदी आदि सब ईश्वर का दिया प्राकृतिक मेडीकल स्टोर ही तो है। उधर ईश्वर ने वेद का ज्ञान दिया। ऋग्वेद का उपवेद, आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कर हम जनता व रोगियों को लाभ पहुँचा सकते हैं। इसके लिए सरकार ने आयुर्वेद की ओर ध्यान दे, सहायता कर, एम्स जैसा आयुर्वेद का प्रतिष्ठान निर्माण कर आयुर्वेद प्रेमियों व जगत पर अत्यन्त उपकार किया है।

- डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह

चन्द्रलोक कालोनी, खुरजा. मो.: ८९७९७९४७९५

* * * * *

अन्तस्ते द्यावापृथिवी दधाम्यन्तर्दधाम्युर्वन्तरिक्षम्।

सजुर्देवेभिरवरैः परैश्चान्तर्यामे मघवन् मादयस्व॥ यजुर्वेद ७.५॥

पदार्थ:- हे (मघवन्) योगी ! मैं परमेश्वर (ते) तेरे (अन्तः) हृदयाकाश में (द्यावापृथिवी) भूमि के समान विज्ञानादि पदार्थों को (दधामि) स्थापित करता हूँ, तथा (उरु) विस्तृत (अन्तरिक्षम्) अवकाश को (अन्तः) शरीर के भीतर (दधामि) धरता हूँ (सजुः) मित्र के समान तू (देवेभिः) विद्वानों से विद्या को प्राप्त होके (अवरैः परैः च) थोड़े वा बहुत योग व्यवहारों से (अन्तर्यामे) भीतरले नियमों में वर्तमान होकर अन्य सब को (मादयस्व) प्रसन्न किया कर॥

भावार्थ:- ईश्वर का यह उपदेश है कि ब्रह्माण्ड में जिस प्रकार के जितने पदार्थ हैं, उसी प्रकार के ही ज्ञान में वर्तमान हैं। योगविद्या को नहीं जाननेवाला उन को नहीं देख सकता, और मेरी उपासना केविना कोई योगी नहीं होत सकता है॥

नारी शिक्षा व गुरुकुल प्रणाली के पुरोधे

— स्वामी श्रद्धानन्द जी

महर्षि दयानन्द सरस्वती की दिव्य दृष्टि ने प्रचलित शिक्षा प्रणाली के दोषों को उस समय देख लिया था, जिस समय वे किसी की सोच के दायरे में नहीं थे। पाश्चात्य शिक्षा पद्धति हमारी मानसिक दासता का मुख्य एवं हमारे चरित्र की चूको का प्रधान कारण हैं। आज इस दोष को लोक समझने लगे हैं। श्रद्धानन्द ने इन्हीं सब कारणों से वर्तमान शिक्षा पद्धति के विरुद्ध अपनी सम्मति प्रकट की थी। वह चाहते थे हमारी शिक्षायेँ मुख्य स्थान संस्कृत साहित्य व इतिहास और गोन स्थान अंग्रेजी को दिया जाये। यदि हम अंग्रेजी में पारंगत न हुए तो कोई बड़ी हानि नहीं, परन्तु संस्कृत में पारंगत न होने से तो हमारे सर्वनाश के दिन निकट आ रहे हैं। यही सब कारण थे जिनसे स्वामी जी प्रचलित शिक्षा प्रणाली-गुरुकुल-का पुनरुद्धार और प्रसार करना चाहते थे। स्वामी जी ब्रह्मचर्य, सत्यनिष्ठा, सदाचार, योग वेद के पठन पाठन प्रवृत्ति प्रस्तुति पर विशेष बल देते थे। वह कहते थे कि ब्रह्मचर्य का पालन किये बिना ईश्वर की प्रारित तो दूर मानव की बुद्धि एवं सान भी उज्ज्वल नहीं बन सकता। उनका यह अविचल विश्वास था कि वेद और वैदिक कर्म के प्रचार से ही देश और जाति का कल्याण होगा।

स्वामी दयानन्द के सम्पर्क में आने एवं सत्यार्थ प्रकाश गहन अध्ययन के पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द (मुंशीराम) ने नारी शिक्षा और गुरुकुल प्रणाली के पुनरुद्धार का बीड़ा उठाया। मुंशीराम जीवपै नारी शिक्षा का चार पहले से ही था। और इसके लिये वह प्रयास भी कर रहे थे। उन्होंने अपनी कन्या पाठशाला खोलने का निश्चय किया। इस सन्दर्भ में आन्दोलन शुरू किया। इस आन्दोलन से दूसरों का तो क्या स्वयं आर्य समाजियों के बड़े विरोध का सामना करना पड़ा। विरोध की सीमा यहाँ तक पहुँच गयी इस संख्या को लेकर व्यक्तिगत आक्षेप तक होने लगे। मुंशीराम जी के संकल्प के बल पर सन् १९४७ विक्रमी में यह पाठशाला खुल गयी जो आज जालन्धर की कन्या महाविद्यालय के नाम से सुविख्यात है।

मुंशीराम जी ने इस मामले में पत्नी शिवदेवी सुशिक्षित करने का प्रयास किया, परन्तु उनकी असमय ही मृत्यु हो जाने के कारण उन पर पुनर्विवाह के लिये उन पर बहुत दबाव डाला गया। इसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया तथा बच्चों के मातृत्व स्थान की स्वयं पूर्ति की। इसी मध्य सन् १९०१ में अपनी पुत्री अमृतकला का विवाह डॉ. सुखदेवजी के साथ जात पाँत के बन्धन को तोड़कर किया। इससे आपको बिरादरी का काफी विरोध सहना पड़ा।

मुंशीराम जी पहले एंग्लो वैदिक कालेज (डी.ए.बी.) से ही अन्य आर्य पुरुषों के समान गुरुकुल के उद्देश्य की पूर्ति की आशा करते थे, पर जब आशा निराशा बन गयी, तब आपने गुरुकुल के लिये आन्दोलन शुरू कर दिया। इसके परिणाम स्वरूप २७ नवम्बर के अधिवेशन में आपने गुरुकुल की योजना तैयार कर सेना को सौंप दी, पर अगस्त सन १८९८ में घोषणा कर दी गयी कि जब तक गुरुकुल के लिये रु. ३०,०००/- (रुपया तीस हजार) एकत्र नहीं कर लेंगे, तब तक घर में पैर नहीं रखेंगे। उस समय देश में अकाल पड़ा था। गुरुकुल की कल्पना भी लोगों के मस्तिष्क में नहीं थी। ऐसी विकट स्थिति में उन्होंने लखनऊ से पेशावर और मद्रास तक का दौरा किया और अपने प्रण को पूरा किया।

८ अगस्त सन् १९०० ई. तक ४० हजार रुपये एकत्र हो गये और लहोर आर्य समाज के एक अधिवेशन में मुंशीराम जी का अभिनन्दन किया गया। तब से वह महात्मा मुंशीराम के नाम से प्रसिद्ध हुये और इनके दिल का आक्षेप में दिया गया नाम महात्मा दिल सार्थक सिद्ध हुआ। गुरुकुल की प्रथम नियमावली में सांगोपांगवेद का अध्ययन, राष्ट्रीय शिक्षा, ब्रह्मचर्य परीक्षा पद्धति के दोषों से मुक्ति, माता-पिता से बढ़कर गुरुशिष्य सम्बन्ध, निःशुल्क शिक्षा, प्राचीन भारतीय इतिहास का अन्वेषण तथा शोध के अध्ययन के लिये गुरुकुल स्थापना के लिये बताये गये। हिमालय की

उपत्यका में मुंशी अमनसिंह के दिये कांगड़ी ग्राम २१-२२, २३, २४ मार्च सन् १९०२ को गुरुकुल कांगड़ी का उद्घाटन हुआ था। आज गुरुकुल कांगड़ी स्वयं में इतना अधिक विख्यात है, उसके बारे में लिखते की आवश्यकता नहीं है। महात्माजी ने गुरुकुल का कार्य हाथ में लेते ही सर्वमेघ यज्ञ करना प्रारम्भ किया। आरम्भ में ही अपने दोनों पुत्रों हरिश्चन्द्र व इन्द्र को गुरुकुल के अर्पण कर दिया। संवत् १९६४ वि० में सद्धर्म प्रचारक प्रेस को भी गुरुकुल को अर्पण कर दिया। तब केवल बच रही थी २० हजार लागत की जलन्धर की कोठी। इसे भी संवत् १९६८ में गुरुकुल को भेंट कर दिया। यह सब उस दशा में जब वह गुरुकुल से अपने निर्वहन हेतु कुछ भी नहीं लेते थे। और सिर पर ३६ हजार रुपये का कर्ज भी था। महात्मा मुंशीराम ने अपने परिश्रम से यह कर्ज भी उतार उतार दिया। आपका स्वास्थ्य पहले से ही खराब था गुरुकुल के लिये की गयी मेहनत ने उसे और भी बिगाड़ दिया। प्रतिनिधि सभा में एक दल इनके विरोध में था जिसमें कई बार सभा के अधिवेशन में इनके ऊपर रुपयों के गबन का आरोप लगाया गया। जब उन्हें यह प्रतीत होने लगा कि उनके संघर्ष में गुरुकुल को हानि होगी। १२ अप्रैल १९१७ को मायापुर वाटिका कनखल में सन्यासाश्रम प्रवेश किया और श्रद्धानन्द नाम रखा व पुत्रैषणा, वित्तैषणा, लोकेषणा आदि को त्यागकर निर्द्वन्द्व होकर लोकसेवा के कार्य में प्रविष्ट हो गये।

— वेदारीलाल आर्य

५, पीहाता, प्यारेलाल नगर, झांसी-२८४००३

मो.नं.: ०९४७३९३७९३८

* * * * *

क्रोध पर प्रेम की विजय

विश्वासमित्र वास्तव में बहुत क्रोधी थे। क्रोध में उन्होंने साचा- मैं इस वसिष्ठ को ही मार डालूंगा। फिर मुझे ब्रह्मर्षि की जगह राजर्षि कहनेवाला कोई रहेगा नहीं। ऐसा सोचकर, एक छुरा लेकर वह उस वृक्ष पर जा बैठे, जिसके नीचे बैठकर महर्षि वसिष्ठ अपने शिष्यों को पढ़ाते थे। शिष्य आए, वृक्ष के नीचे बैठ गए। वसिष्ठ आए, अपने आसन पर विराजमान हो गए। शाम हो गई। पूर्व के आकाश में पूर्णमासी का चाँद निकल आया। विश्वामित्र सोच रहे थे, अभी सब विद्यार्थी चले जायेंगे। अभी मैं नीचे उतरूँगा, एक ही वार में अपने शत्रु का अन्त कर दूँगा। तभी एक विद्यार्थी ने नए निकलते हुए चाँद की ओर देखकर कहा- कितना मधुर चाँद है वह ! कितनी सुन्दरता है उसके अन्दर!

वसिष्ठ ने चाँद की ओर देखा; बोले- यदि तुम ऋषि विश्वामित्र को देखो तो इस चाँद को भूल जाओ। यह चाँद सुन्दर अवश्य है, परन्तु ऋषि विश्वामित्र इससे भी अधिक सुन्दर हैं। यदि उनके अन्दर क्रोध का कलंक न हो, तो वे सूर्य की भाँति चमक उठें।

विद्यार्थी ने कहा- परन्तु महाराज ! वे तो आपके शत्रु हैं। स्थान-स्थान पर आपकी निन्दा करते हैं।

वसिष्ठ बोले- मैं जानता हूँ, परन्तु मैं यह भी जानता हूँ कि वे मुझसे अधिक विद्वान् हैं। मुझसे अधिक तप उन्होंने किया है। मुझसे अधिक महान् हैं वे। मेरा माथा उनके चरणों में झुकता है।

वृक्ष पर बैठे विश्वामित्र इस बात को सुनकर चौंक पड़े। वह बैठे थे इसलिए कि वसिष्ठ को मार डालें और वसिष्ठ थे कि उनकी प्रशंसा करते नहीं थकते थे। एकदम वे नीचे कूद पड़े। छुरे को एक ओर फेंक दिया। वसिष्ठ के चरणों में गिरकर बोले- मुझे क्षमा करो!

वसिष्ठ प्यार से उन्हें उठाकर बोले- उठो ब्रह्मर्षि!

विश्वामित्र ने आश्चर्य से कहा- ब्रह्मर्षि ? आपने मुझे ब्रह्मर्षि कहा ? परन्तु आप तो ये मानते नहीं हैं ?

वसिष्ठ बोले- आज से तुम ब्रह्मर्षि हुए महापुरुष ! तुम्हारे अन्दर जो चाण्डाल था, वह निकल गया।

यह क्रोध बहुत बुरी बला है ! सवा करोड़ नहीं, सवा अरब गायत्री का जाप कर लें, एक बार का क्रोध इसके सारे फल को नष्ट कर देता है।

डिजिटल इण्डिया या पाखण्ड युक्त भारत...

- नयन कुमार आचार्य
सम्पादक, वैदिक गर्जना

भारतीय समाज आज तकनीकी दृष्टि से आगे बढ़ रहा है। देहातों तक उच्च शिक्षा पहुंच चुकी है। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी डिजिटल इण्डिया के तहत सारे देश को तन्त्रज्ञान के माध्यम से जोड़ना चाहते हैं। देश तो सुधर रहा है, किन्तु यहाँ के नागरिकों की बुद्धि धार्मिक पाखण्ड व अन्धविश्वासों से बुरी तरह से घिर चुकी है। देश की सार्वजनिक अवस्था उस व्यसनग्रस्त युवक के भाँति बन गयी है, जो बाहर से सुंदर तो दिखाइ देता है, किन्तु आन्तरिक दृष्टि से खोकला बन चुका हो। आधुनिक विज्ञान के कारण आज मानव भौतिक प्रगति के शिखर पर विराजमान तो है, किन्तु धर्म-कर्म, पूजा-उपासना, भक्ति-अध्यात्म के विषय में वह पूर्णतः अपढ व गंवार नजर आ रहा है। परिणामस्वरूप देश के कई साधु, बाबा व महाराज लोगों का धंदा तेजी से चल रहा है। ढाई वर्ष पूर्व पाखण्डी सन्त रामपाल का गढ धाध्वस्त हुआ, आसाराम व नारायण साई ये पिता-पुत्र हत्या व बलात्कार के आरोपों में सलाखों में बंद है। तो अभी-अभी डेरा सच्चा सौदा के तथाकथित मुखिया राम-रहीम जैसे हीरो बाबा का विराट साम्राज्य धराशायी हो चुका है। ऐसे और कितने ही बाबा लोग हैं, जो देश में जगह-जगह अपने बड़े-बड़े मठ-मन्दिरों व आश्रमों का निर्माण कर ऐशोआराम की जिन्दगी बीता रहे हैं। केवल हिन्दू ही नहीं, इस्लाम, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि सम्प्रदायों में भी इसी तरह के परिदृश्य न्यूनाधिक देखने मिलेंगे। शायद उनका स्वरूप मात्र अलग हो सकता है।

इन सभी बाबा-साधुओं की आज तक इतनी क्यों चलती है? इसका कारण ही यह है कि भारतीय राजनीति इन बाबाओं के आधीन हो चुकी है। हर कोई राजनेता, अभिनेता, व्यापारी, उद्योजक या तथाकथित उच्च विद्याविभूषित डॉक्टर, अभियंता, अधिकारी आदि इन बाबाओं के भक्त बनें हैं। यह सिलसिला बहुत पहले से जारी है। अनेकों प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, केन्द्रीय मंत्री, सांसद व विधायक आदि इन तथाकथित साधुओं के चले रहे हैं। इनमें गुरु धीरेन्द्र ब्रह्मचारी, तांत्रिक बाबा चन्द्रास्वामी, सत्य साईबाबा जैसे कईयों के नाम प्रसिद्ध हैं। इनसे पूर्व कई तपस्वी व त्यागी अच्छे साधु लोग भी हो चुके हैं। उनका जीवन समाजोपयोगी भी था, लेकिन उनके बाद उनके भक्तों ने उनकी समाधियाँ व मूर्तियाँ बनाकर मन्दिरों के रूप में पाखण्ड शुरू किया। इसका एक नमूना है शिर्डी के साईबाबा का। इस विरक्त साधु ने जीवन में एक रुपया भी किसीसे नहीं लिया होगा, किन्तु आज उनके नाम से शिर्डी में अन्ध भक्तों का बढ़ता जमघट नजर आ रहा है। आजकल यहाँ साईबाबा की समाधि का शताब्दी वर्ष मनाया जा रहा है। तब इस मन्दिर के ट्रस्टी व सरकार द्वारा अनेकों सुविधायें खड़ी की जा रही है। हाल ही में राष्ट्रपति के करकमलों से हवाई अड्डे का उद्घाटन भी किया गया। ताकि सारे विश्व के साईभक्त कुछ ही समय में इनका दर्शन करा सके। इस संस्थान की साम्प्रतिक स्थिति अब दक्षिण के महाधनी तिरुपति बालाजी मन्दिर के बराबर सी होने जा रही है। हर कोई धनवान-अमीर भक्त आता है और सोने या चाँदी का मुकुट पहनाकर चला जाता है। इससे पता चलता है कि देश में पाखण्ड का बोलबाला कितना बढ़ रहा है। साथ ही देश में अन्य अनेकों मन्दिरों व आश्रमों में बढ़ोतरी हो रही है। अपने इष्ट देवी-देवताओं व साधु-बाबाओं के जड़मूर्तिघरों को सजाने में ये इतने सक्रिय हो गये हैं कि इसके लिए वैज्ञानिक तन्त्रज्ञान का इस्तेमाल बड़े पैमाने पर हो रहा है। स्वयं को साई बाबा का ही अवतार घोषित करनेवाले पुट्टापर्थी (आन्ध्र.) के सत्य साईबाबा के चमत्कार व उनसे जुड़ी कहानियों को सारा देश जाता है। अनेकों राजनेता, मंत्री, खिलाड़ी ये सभी सत्य साईबाबा के दर्शन के लिए उनके चरणों में उपस्थित होते थे। दक्षिण में अम्मा भगवान की भी आज कल बहुत चलती है। इनका दर्शन पाने के लिए हजारों रुपये गिनने पड़ते हैं। इनके भक्तों में डॉक्टर, इंजिनियर, व्यापारी व उच्चशिक्षित लोगों की भरभार है। महाराष्ट्र के नरेन्द्र महाराज जो कि स्वयं को श्री दत्तगुरु का

अवतार बताते हैं। इन्हीं के दीक्षा समारोह में महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री उपस्थित होकर कहते हैं- धर्मसत्ता (पाखण्डपूर्ण) का राजसत्ता पर अंकुश होना चाहिए। इनके मन्दिर संस्थानों द्वारा भक्तगणों व जनसामान्यों को अनेकों सुविधाएँ जुटाई जाती हैं। साथ ही अस्पताल, सेवाकार्य, अल्पशुल्क में निवास व भोजनादि का प्रबंध बड़े पैमाने की बात है कि, यह सारा धन भक्तों के दान द्वारा ही मिलता है और अब उसी धन से सेवायें दी जा रही हो, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है?

इस तरह हमारा देश दिनों दिन अंधःविश्वासों, पाखण्डों के चक्की में पीसा जा रहा है और इसके लिए राजनेताओं व शासकवर्ग की ओर से पुरा सहयोग मिलता है, तो इसमें बढ़ोतरी क्यों नहीं होगी? आज सारा विश्व वैज्ञानिक प्रणाली से प्रगति कर रहा है। भविष्य में भारत देश को संसार की एक महाशक्ति बनाने की घोषणाएँ की जा रही है। तब यदि इस तरह पाखण्ड व अन्धविश्वास का वर्चस्व बढ़ता रहेगा, तो यह देश पाखण्डपूर्ण महाशक्ति ही बनेगा? इससे बचना हो तो वैदिक विचारधारा पर आधारित व्यवस्था के निर्माण के लिए प्रयत्न करने होंगे, जिसका संकेत महर्षि स्वामी दयानंद ने किया था। अन्यथा विवेकशून्य अन्धरुढ़िवादिता से ग्रस्त पाखण्डपूर्ण विचारों से देश की घोर अवनति हुए बिना नहीं रहेगी...

विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः।

बला घर आ गई

- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु वेद सदन, अबोहर-१५२११६

श्री पण्डित इन्द्र जी ने अपने बाल्यकाल का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संस्मरण लिखा है। दिलजले बलिदानी लेखराम को समझने के लिए यह संस्मरण पढ़ना हमारी दृष्टि में परमावश्यक है।

पण्डित लेखराम जी का पिता से सगे भाई जैसा प्रेम था। हमारे घर पर उनका आना-जाना और रहना निःसंकोच था। हम बच्चे उन्हें पण्डित जी नाम से पुकारा करते थे। घर में प्रायः उनकी चर्चा हुआ करती थी। पिताजी उनके निडरपन के कारनामे बड़ी प्रशंसा के साथ सुनाया करते थे। ताई जी उनसे काफी असंतुष्ट रहती थीं। वह गृहस्वामिनी ठहरीं, हमेशा का मेहमान कैसे रुच सकता था? एक और भी बात थी। वह स्त्रीसुलभ नैसर्गिक बुद्धि से यह अनुभव किया करती थीं कि इस अनथक उपदेशक के साथ जरूर कोई-न-कोई मुसीबत बंधी हुई है, जो हमारे घर पर भी आ सकती है। जब बाहर से खबर आती थी कि पण्डित लेखराम जी आ रहे हैं तब ताई जी प्रायः कहा करती थीं आ गई आफत।

ताई जी की इस मनोभावना का कारण यह था कि उस युग में आर्यसमाज को सब ओर से विरोध का सामना करना पड़ता था। आर्यसमाज पर किये गये प्रत्येक प्रहार का उत्तर देने के लिए पण्डित लेखराम व मुंशीराम सबसे आगे होते थे। श्री सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार, पूर्व उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी के शब्दों में स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज तो समय की प्रत्येक चुनौती का उत्तर थे। पण्डित लेखराम जी का सुखाराम जी के घर पर आगमन इसी कारण अच्छा नहीं समझा जाता था। परिवार वाले समझते थे कि इनकी प्रेरणा व संगति से ही मुंशीराम नित्य नूतन विपदा से आलिंगन करने को सदा उद्यत रहता है। मुंशीराम व लेखराम के स्वभाव में यह समानता उनकी मैत्री को पक्का करनेवाली थी। एक कल्याण मार्ग का पथिक था तो दूसरा बलिदान मार्ग का पथिक। किसी भी समाज, संगठन व राष्ट्र का कल्याण बलिदान के भाव से ही सम्भव है। इस प्रकार कल्याण व बलिदान दोनों पर्यावाची हैं। एक ही भाव के दो शब्द हैं। मुंशीराम व लेखराम की मैत्री एक दशाब्दी से भी कम रही। इतने स्वल्पकाल में दोनों ही एक-दूसरे से ऐसे घुलमिल गये कि एक के जीवन की चर्चा दूसरे के बिना अधूरी ही रहती है। श्रद्धानन्द में लेखराम ओतप्रोत हैं और लेखराम के व्यक्तित्व में मुंशीराम को हम रमा हुआ पाते हैं।

एक कविता के कुछ पद्य हमारे इस भाव और उपर्युक्त घटना को समझने में सहायक हो सकते हैं। स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रति इस में लिखा है।

रहा तड़पता सदा तरसता बलि होने को। रक्त बहाया उसने जग का मल धोने को॥ लेखराम सी रही हिये में आग धधकती। उसकी गर्जन सुनकर के फिर जागी जगती॥ उसके तोमय जीवन की छवि निराली। नित्य नई उस देश धर्म हित विपदा पाली॥

बलात्कार-मुक्तसमाज के लिए लें संकल्प

— सीताराम गुप्ता

ए.डी.-१०६-सी, पीतमपुरा, दिल्ली-११००३४. चलभाष: ०९५५५६२२३२३

बात कोई बीस-बाइस साल पुरानी होगी। लंच टाइम में कुछ लोग भोजन कर रहे थे तो कुछ चाय की चुस्कियाँ ले रहे थे और कुछ अखबार पढ़ रहे थे। एक साहब ज़ोर-ज़ोर से समाचार पढ़-पढ़कर भी सुना रहे थे। उन्होंने एक समाचार पढ़कर सुनाया कि कुछ लोगों ने कए महिला के साथ छीना-झपटी और बलात्कार किया। समाचार सुनाने के बाद उसने दाँत फाड़ दिए। ये औरतें होती किसलिए हैं? छीना-झपटी और मज़े लेने के लिए ही तो होती है, ये यह कर एक अन्य व्यक्तित्वहीन श्रोता ने अपनी टिप्पणी दी और बेहयाई से उसने भी दाँत फाड़ दिए।

मैं उबल पड़ा और प्रतिवाद किया लेकिन उनकी बेहयाई जारी रही। मैंने कहा कि यदि उस महिला की जगह तुम्हारी बहन या पत्नी होती तो क्या फिर भी इसी तरह दाँत फाड़ते? हमारी बहन क्यों होती तेरी बहन नहीं होती, एक ने निर्लज्जतापूर्वक उत्तर दिया। बात इतनी बढ़ गई कि नौबत हथापाई तक जा पहुँची। इस-बारह लोग थे। सभी लोग शिक्षित थे जिनमें से ज्यादातर एमए बीएड अथवा बीए बीएड थे। और हम सभी जिस अत्यंत सम्मानित पेशे से संबंधित थे आप अवश्य ही समझ गए होंगे। कुछ तटस्थ थे और बाकी सभी ने मुझे दोषी ठहराया।

वे सब एक हो गए थे और एक सज्जन ने मुझे धमकी भरे अंदाज़ में कहा कि हम सब तेरा सामाजिक बहिष्कार कर देंगे। मैंने कहा कि तुम क्या मेरा सामाजिक बहिष्कार करोगे मैं ही तुम सब का सामाजिक बहिष्कार करता हूँ। और सचमुच लंबे समय तक सामाजिक बहिष्कार का ये सिलसिला चला बाद में सब कुछ सामान्य सा हो गया, लेकिन उनकी मानसिकता को न तो मैंने उस समय सही माना और न आज ही मानता हूँ।

१६ दिसंबर २०१२ की हृदयविदारक सामूहिक बलात्कार की झकझोर कर रख देने वाली घटना आप भूले नहीं होंगे। इस घटना के बाद मेरे पास कई प्रबुद्ध मित्रों के फोन आए कि मैं इस घटना पर अवश्य ही अपने विचार प्रकाशित करवाऊँ। जब भी मैं १६ दिसंबर २०१२ की घटना के बारे में सोचता तो उपरोक्त वही बीस-बाइस साल पुरानी घटना मेरी आँखों के सामने आ जाती। क्या हमारी ऐसी ही मानसिकता और उत्तरदायित्व के अभाव का परिणाम नहीं है आज आम हो चुकी बलात्कार की घटनाएँ?

हमने क्रूरता की शिकार नवयुवती को बहादुर लड़की का खिताब दिया। उसकी मृत्यु को शहादत का दर्जा दे दिया। न केवल एक बेबस, लाचार युवती की अस्मिता को कुचला गया, अपितु उसके शरीर को भी रौंदा और कुचला गया था जिससे उसकी मौत तक हो गई लेकिन इसमें शहादत कैसी? एक पीड़िता व मृतका के लिए नए-नए विशेषण गढ़ कर अथवा पुरस्कार स्थापित करके हम आखिर सिद्ध क्या करना चाहते हैं? एक मज़लूम अथवा नृशंसता की शिकार युवती की मौत को महामंडित कर कहीं हम अपनी चरित्रहीनता, कर्तव्यहीनता, अयोग्यता अथवा विकृत मनोग्रंथियों को छुपाने का प्रयास तो नहीं कर रहे हैं?

इंडिया गेट पर जाकर मोमबत्तियाँ जलाना सरल है। हालांकि उक्त प्रकार से गलत का विरोध करना अथवा न्याय की मांग करना बुरा नहीं लेकिन उससे अच्छा है जहाँ भी गलत बात दिखलाई पड़े उसका विरोध किया जाए चाहे उसमें हमें परेशानी ही क्यों न उठानी पड़े। ऐसी घटनाओं के लिए वास्तव में हम सब दोषी हैं। सरकार और प्रशासन ही नहीं दोषी है पूरा समाज। दोषी है हर शख्स। माना कि यह कुछ लोगों का वहशीपन है लेकिन हमारी नैतिकता को क्या हुआ? हमारी सतर्कता को क्या हुआ? हम सबकी कुछ जिम्मेदारियाँ होती हैं उनका क्या हुआ?

एक बात और वो ये कि जब हमारे अपने नज़दीकी लोग कोई गलत कार्य करते हैं तो हम न केवल तटस्थ बने रहते हैं अपितु उन्हें बचाने की कोशिश में जी-जान से लग जाते हैं। क्या व्यभिचार अथवा उत्पीड़न में लिप्त अपने

किसी रिश्तेदार अथवा मित्र का हमने कभी विरोध या बहिष्कार किया? क्या अपने बच्चों विशेष रूप से बेटों के गलत आचरण को लेकर उनकी भर्त्सना की, उन्हें सुधारने के लिए कभी भूखे-प्यासे रह कर सत्याग्रह किया? किया तो अच्छा है क्योंकि इसी के अभाव में पनपते हैं सारे विकार।

इंदौर की महारानी अहिल्याबाई होल्कर अत्यंत न्यायप्रिय व प्रजावत्सल शासक हुई हैं। युवावस्था में ही पति की मृत्यु हो गई थी। उनका एक मात्र पुत्र था भालेराव होल्कर। वह अत्यंत उद्विग्न हो चला था। युवा लड़कियों के साथ छेड़छाड़ और जबरदस्ती करना उसके लिए सामान्य सी बात हो गई थी। अहिल्याबाई को जब अपने पुत्र की इन करतूतों का पता चला तो उसने उसे सार्वजनिक रूप से हाथियों के पैरों तले दिया जिससे हाथी उसे कुचल सकें और उससे सबक लेकर कोई भी पुरुष किसी महिला से अभद्रता दिखाने का साहस न कर सके। अपनों की गलती पर सज़ा देना तो दूर हम अपने विकृत मनोभावों से छुटकारा पाने तक का प्रयास नहीं करते।

वहशीपन अनैतिकता व अपराध है लेकिन तटस्थता भी कम अनैतिक व अपराध नहीं। ये कुछ लोगों का वहशीपन हो या हमारी तटस्थता अथवा सरकार व प्रशासन की लापरवाही, इन सबके पीछे भी कुछ कारण हैं और वो हैं सही शिक्षा, संस्कार व नैतिक मूल्यों का अभाव। तटस्थता व नैतिक मूल्यों के अभाव में इस समस्या का समाधान सरल नहीं। आज हम किसी को सार्वजनिक रूप से हाथियों के पैरों तले तो नहीं कुचल सकते लेकिन अपराधियों को कठोर दंड तो दिया जा रहा है। अपराधियों को मृत्युदंड के बावजूद ये सिलसिला थम नहीं रहा है तो इसका यही कारण है कि अपराध के बीज हमारी सोच में हैं। उस विकृत सोच का कुचलना अथवा मानसिकता को बदलतना ज़रूरी है।

यदि हम स्वयं अपनी और दूसरों की मानसिकता बदलना चाहते हैं और वहशीपन से समाज को छुटकारा दिलाना चाहते हैं तो आज ही और सदैव ही यही संकल्प कीजिए और करवाइए:

१. मैं न केवल स्वयं किसी पर अत्याचार नहीं करता अपितु दूसरों द्वारा किए गए अत्याचार को भी नज़रअंदाज़ नहीं करता।
२. मैं जहाँ भी अत्याचार होते देखता हूँ अपनी आवाज़ उठाता हूँ।
३. शोषण व उत्पीड़न के विरुद्ध मैं तत्क्षण आवाज़ उठाता हूँ।
४. शोषण, अत्याचार व उत्पीड़न के विरुद्ध मैं तटस्थ होकर शोषक, अत्याचारी व उत्पीड़क के विरुद्ध आवाज़ उठाता हूँ।

* * * * *

जीव (जारी)

जीव की शक्ति अल्प और एक ही प्रकार की और सामर्थ्य भी अल्प, किन्तु २४ (चौबीस) प्रकार का यथा-बल, पराक्रम, आकर्षण, प्रेरणा, गति, भीषण, विवेचन, क्रिया, उत्साह, स्मरण, निश्चय, इच्छा, प्रेम, द्वेष, संयोग, विभाग, संयोजक, विभाजक, श्रवण, स्पर्शन, दर्शन, स्वादन, और, गन्धग्रहण, तथा, ज्ञान होता है। इनसे ही जीवन मुक्ति में भी आनन्द की प्राप्ति भोगता है। मुक्ति में जीव का ब्रह्म (परमेश्वर) में लय नहीं होता। जीव की मुक्ति का अर्थ है - दुःखों से छूटकर आनन्दस्वरूप सर्वव्यापक अनन्त परमेश्वर के धाम में जीव का आनन्द से रहना।

- सत्यार्थ प्रकाश (नवम समुल्लास)

चमत्कारों का पोल खाता

- इन्द्रजित् देव

विज्ञान का एक सर्वमान्य नियम है- बिना किसी कारण के कार्य नहीं होता। लोहे के बिना रेल का पहिया अथवा पटरी बन नहीं सकती। लोहा रेल का कारण तथा रेल का पहिया अथवा पटरी कार्य हैं। इसी प्रकार रोटी कार्य है तो आटा कारण है। आटा को कार्य भी माना जा सकता है। तब इस कार्य का कारण गेहूँ माना जाएगा। इसी व्यवस्था को वैशेषिक दर्शन (४/३) में कहा है - कारणभावात् कार्यभावः। इसी प्रकार इस सृष्टि का भी कोई-न-कोई कारण तो होगा ही। यह वैदिक सिद्धान्त आज का विज्ञान भी स्वीकार कर चुका है- Matter cannot be created no it can be destroyed विज्ञानवेत्ताओं ने विज्ञानवेत्ताओं ने स्पष्ट घोषणा की है कि जहाँ Material Cause (उत्पादान कारण) नहीं होगा, वहाँ वस्तु की उत्पत्ति नहीं हो सकती। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने क्रान्तिकारी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम् समुल्लास में लिखा है- साकार वस्तु से ही साकार वस्तु बनती है। सांख्यदर्शन १/४३ में भी लिखा है- नावस्तुनो वस्तुसिद्धिः, अर्थात् जो वस्तु कारण में नहीं है, वह कार्य में भी नहीं आ सकती। सांख्य दर्शन १/८३ में भी लिखा है- कारणभावाच्च अर्थात् कार्य का अस्तित्व कारण को छोड़कर पृथक् नहीं होता।

इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन गीता के १२/१६ वें श्लोक में भी किया है-

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।

उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः॥

अर्थात् यदि कोई वस्तु वर्तमान नहीं है तो उसका वर्तमान (=उपस्थित) नहीं हो सकता तथा यदि उपस्थित है तो वह अनुपस्थित हो जाए, ऐसा नहीं हो सकता। इन दोनों तथ्यों का निर्णय तत्त्वदर्शियों अर्थात् प्रकृति तथा परमाणुओं का साक्षात्कार करने वाले विद्वानों ने किया है।

जगत् तथा वस्तु के कारण व कार्य को यदि हम सच्चाई व गहराई से जान लें तो संसार में प्रचलित अन्धविश्वासों व कथित चमत्कारों की पोल-पट्टी खुल सकती है। पहले हम जगत् के ३ कारणों को समझ लेते हैं, रि चमत्कारों की पोलपट्टी खुलेगी। पहला कारण है- उपादान। उपादान का अर्थ है- जिसके बिना कुछ न बने। इसे अंग्रेजी में Material Cause वैज्ञानिकों ने स्वीकारा है। स्वर्ण से आभूषण बने हैं। घड़ा मिट्टी से बनता है। रोटी आटे के बिना नहीं बनती। वस्त्र रुई से बनता है। ये सब उपादान कारण अर्थात् पदार्थ हैं, परन्तु यह भी सत्य है कि इनमें से कोई एक भी वस्तु अपने-आप बाल्टी नहीं बन सकता। स्वर्ण से आभूषण, मिट्टी से घड़ा, रुई से वस्त्र, आटे से रोटी तथा लोहे से रेल का पहिया, दरवाजा या बाल्टी अपने-आप नहीं बनती। इन्हें बनाने वाला कोई-न-कोई व्यक्ति अवश्य होना चाहिए। जिसके द्वारा बनाने से बने, वह दूसरा कारण है-निमित्त। इसे अंग्रेजी में आधुनिक वैज्ञानिकों ने Efficient Cause कहा है। स्वर्ण से आभूषण बनाने वाला स्वर्णकार निमित्त कारण है। मिट्टी से घड़ा बनाने वाला कुम्हार निमित्त कारण है। आटे से रोटी बनाने वाली हमारी माँ निमित्त कारण है। लोहे से बाल्टी या दरवाजा बनाने वाले को लोहार कहना होगा। तीसरा कारण साधारण कारण माना जाता है जिसे अंग्रेजी में आधुनिक वैज्ञानिकों ने Formal Cause नाम से अभिहित किया है। दुकान में स्वर्ण पड़ा हो, स्वर्णकार भी वहाँ उपस्थित हो तो क्या आभूषण बन जाएगा? हाथ, आँख, प्रकाश, काल व अग्नि आदि स्वर्णकार को अपेक्षित हैं। इनके बिना वह आभूषण नहीं बना सकता। घड़ा, बाल्टी, वस्त्र व रोटी आदि बनाने के लिए भी यही नियम लागू होता है। उपकरणों व प्रयोजनों का होना भी अनिवार्य है। आभूषण, रोटी, घड़ा व दरवाजा आदि किस काम आएंगे? किसके काम आएंगे, इनके प्रयोजन क्यों हैं?

इस आधार पर यह संसार, यह सृष्टि या जगत् भी बिना कारण नहीं बन सकता था, न ही बिना कारण बना है।

यह बनाया गया है, इसका सृजन किया गया है। इसीलिए इसे सृष्टि भी कहते हैं। यह अनित्य है। यह बनाई गई हैं। बनाने से पूर्व यह न थी। यह नित्य वस्तु प्रकृति से बनाई गई है। इसे अंग्रेजी में आधुनिक वैज्ञानिकों ने Matter कहा है व स्वीकार किया है।

सृष्टि साकार है तो प्रकृति भी साकार है क्योंकि साकार वस्तु से ही साकार वस्तु उत्पन्न होगी। परमेश्वर क्योंकि निराकार है, अतः उससे सृष्टि या जगत् उत्पन्न हुआ, यह मानना सर्वथा असत्य है। सृष्टि प्रकृति से सृजित की गई। उसके बिना सृष्टि बन नहीं सकती थी। अतः प्रकृति उपादान कारण (Material Cause) है। वह जड़ पदार्थ है। अपने आप कुछ नहीं कर सकती। परमेश्वर सृष्टि का निमित्त कारण (Efficient Cause) है अर्थात् ईश्वर ने प्रकृति से सृष्टि या कहिए जगत् बनाया, परन्तु किस प्रयोजन तथा किन उपकरणों से सृष्टि या जगत् को बनाया? यह भी चिारणीय है। मिट्टी के अतिरिक्त चाक आदि सहायक कारण तथा घड़ा किस काम आया, किसके काम आया, इसका प्रयोजन क्या होगा—यह सबजानना भी आवश्यक है। स्पष्ट उत्तर यह है कि जो सृष्टि का भोग करता है अर्थात् जीव। यह सृष्टि उसी के लिए बनाई गई है। उसे Formal Cause अर्थात् साधारण कारण कहा जाता है। ईश्वर का ज्ञान, ईश्वर की शक्तियाँ आदि उपकरण भी साधारण कारण ही हैं।

इस विश्लेषण के विपरीत कुरान (मं.१/सि.१/सू.२ आ. ११७) के अनुसार खुदा ही आरम्भ में था। शेष कुछ भी न था। वह भूमि और आसमान को उत्पन्न करने वाला है तथा उसे कुछ करना नहीं पड़ता। वह जो कुछ करना चाहता है, वह कहता है= हो जा (=कुन) तो वह हो जाता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने ऐसा मानने वालों से पूछा है कि हो जा वाला आदेश किसको दिया गया? किसने सुना? कौन-क्या बना? किस पदार्थ से बना? किसके लिए बना? जब वह मानते हो, कहते हो कि खुदा के सिवाय कोई वस्तु न थी तो यह विशाल-विस्तृत ब्रह्माण्ड बिना Material Cause अर्थात् उपादान कारण के कैसे बन गया? तुम एक मकड़ी की टाँग ही बनाकर दिखाओ। ईसाई भी बाईबल के अनुसार ऐसा ही मानते हैं तथा उनसे भी यही हमारे प्रश्न हैं। पौराणिकों का विचार यह है कि जैसे मकड़ी बाहर से कोई पदार्थ नहीं लेती, अपने शरीर में से ही तन्तु निकालकर जाला बना लेती है, ऐसे ही परमेश्वर अपने में से ही सृष्टि को बना लेता है। पौराणिकों/हिन्दुओं से हमारा निवेदन है कि मकड़ी अपने शरीर में उपस्थित जड़ प्रकृति से बने जड़ पदार्थों से जाला बनाती है। अपनी आत्मा से वह कुछ पदार्थ निकालकर कुछ नहीं बना सकती। साकार वस्तु साकार वस्तु से ही बनती है, यह बात पहले भी लिखी गई है। मकड़ी का आत्मा निराकार है तथा निराकार से साकार वस्तु बन ही नहीं सकती। मकड़ी की आत्म निमित्त कारण है। उसका जड़ रूप शरीर तन्तु का उपादान कारण है।

इस सम्बन्ध में महर्षि कपिल का यह सूत्र विचारणीय है—**नावस्तुतो वस्तुसिद्धिः।—सांख्यदर्शनम् १/४३**
अर्थात् अवस्तु से वस्तु की सिद्धि नहीं होती। कार्यमात्र का आदान वस्तुभूत होना चाहिए।

पूर्वोक्त तीनों कारणों को समझ लें तो बहुत-से अन्धविश्वास, पाखण्ड व कथित चमत्कार समाप्त हो सकते हैं। मुझे स्मरण है कि सन् १९७२ में सत्य साईं बाबा अपना एक चमत्कारपूर्ण प्रदर्शन करके घड़ियाँ, भस्म व अंगूठियाँ निकालकर बाँट देता था। दर्शक यही मानते थे कि यह बाबा अपनी अलौकिक सिद्धियों से ऐसा चमत्कार करता है। तभी कर्नाटक के एक विश्वविद्यालय के उपकुलपति ने उसे चुनौतीपूर्ण पत्र लिखा था— आप मेरे यहाँ आकर रात्रि विश्राम करें। अगली प्रातः मेरे सामने स्नान करें तथा वस्त्र पहनें। तत्पश्चात् मैं आपको विश्वविद्यालय में ले चलूँगा। वहाँ विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों, प्राध्यापकों एवं अधिकारियों के समक्ष अपना चमत्कारपूर्ण प्रदर्शन करके दिखाएँगे तो मैं भी आपका श्रद्धालु बन जाऊँगा। इसका कोई उत्तर बाबा ने नहीं दिया था तथा न ही फिर कोई कथित चमत्कार ही दिखाया। यदि वह उपकुलपति की इच्छानुसार प्रदर्शन करना मान जाता तो स्वतः सिद्ध हो जाना था कि वह अपने वस्त्रों के भीतर दाएँ-बाएँ कुछ घड़ियाँ, अंगूठियाँ व भस्म की पुड़ियाँ छिपाकर लाता था तथा वस्त्र को दबाने से घड़ियाँ आदि बाहर आ जाती थीं। दुःख की बात यह है कि अधिकतर लोग यह नहीं सोचते कि बाबा के

वस्त्रों के नीचे कोई काराखना तो था नहीं, रि घड़ियाँ कैसे बाहर निकल आती थीं। यदि ऐसे ही अंगूठियाँ बन सकती हैं तो सभी स्वर्णकारों की दुकानें बन्द हो जानी चाहिए थीं। यदि स्वर्ण न हो, स्वर्णकार न हो तथा उसके उपकरण व साधन न हों तो घड़ियाँ बन ही नहीं सकतीं, यह न सोचने वाले लोग ऐसे बाबाओं के शिष्य बनते हैं। ज्यों-ज्यों उक्त बाबा की पोल खुलती गई त्यों-त्यों अपने इस प्रकार के चमत्कार दिखाने उसने बन्द कर दिए तथा वह अपने आश्रम तक ही सीमित होकर रह गया था, परन्तु दिव्य व अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त कर लेने का दावा करने वाले बाबाओं की कमी अब भी नहीं है। बिना उपादान व साधधारण कारणों के जब ईश्वर भी कुछ नहीं बना सकता तो, कोई मनुष्य कैसे ऐसा कर सकता है?

इस विषय में कुछ ऐसे ढोंगों का भण्डाफोड़ करना भी हमें अभीष्ट है, जो ढोंगी साधुओं द्वारा जनता को मूर्ख बनाकर धन ऐंठने के लिए कि-दिखाए जाते हैं। पहला ढोंग किसी बाबा द्वारा भभूत उत्पन्न करना है। वह बाबा राख, इत्र तथा चावल के मांड की गोलियाँ बनाकर उन्हें अंगूठे के बीच फंसाकर रखते हैं तथा कुशलतापूर्वक वायु में हाथ हिलाकर लोगों में बाँटते हैं व प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार सिके या चित्र से भभूत पैदा करने के लिए ऐसे ढोंगी मरकूस क्लोराइड का प्रयोग करते हैं। पहले से रसायन लगी अंगुलियों से जब ये लोग चित्रों को छूते हैं तो रासायनिक क्रिया से तस्वीर या सिके का अल्यूमीनियम राख में बदल जाता है।

कई ढोंगी साधु त्रिशूल को जीभ के आरपार करके दर्शकों को प्रभावित करते हैं। वस्तुतः उप त्रिशूल की बनावट में एक प्रकार का लूप होता है जिसे बाबा लोग कुशलता से छिपाकर जीभ में फँसा लेते हैं। इसी प्रकार कुछ बाबद बने ढोंगी साधु अपनी मन्त्र-शक्ति से स्वयं अग्नि हवनकुण्ड में अग्नि प्रज्वलित करने का दावा करते हैं। इसके लिए वे ग्लिसरीन को धोखे से घृत के रूप में प्रयोग करते हैं तथा लकड़ियों के नीचे पोटेशियम परमैंगनेट रखा रहता है। जब इस पर हवा की जाती है तो ग्लिसरीन तथा पोटेशियम परमैंगनेट की क्रियासे अग्नि प्रज्वलित स्वतः होती है। इस विषय में हम महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के १३ जुलाई १८७५ को पुणे में दिए एक उपदेश में से ये शब्द उद्धृत करना उचित समझते हैं- मन्त्रों के कारण आग उत्पन्न होती थी, यदि ऐसा मानें तो मन्त्र बोलने वाला स्वयं क्यों नहीं जलता था?

कुछ स्थानों पर तान्त्रिक भोले-भाले लोगों से धन उगाहने के उद्देश्य से उन पर भूत-प्रेत का साया बताते हैं तथा उनके मन में बैठे अन्धविश्वास का अनुचित लाभ उठाने के उद्देश्य से उन्हें भयाक्रान्त कर देते हैं। तत्पश्चात् भूत-प्रेत निकालने के नाम पर धन, चावल, नारियल तथा अन्य सामान मंगाते हैं। मन्त्र पढ़ते हुए जब नारियल पर पानी फैंकते हैं, तो पहले से सोडियम अन्दर रखे नारियल में से सोडियम और पानी की क्रिया से आग लग जाती है, परन्तु साधु लोग उस व्यक्ति के भूत-प्रेत या चुड़ैल को निकालने का दावा करते हैं। मुस्लिम समुदाय के पीरों-फकीरों द्वारा अग्नि पर चलतना बहुत प्रचलित है। वस्तुतः मानव शरीर बिना जले तथा बिना पीड़ा के एक सैकेण्ड के तीसरे हिस्से के तक आग सहन कर सकता है। इसी सिद्धान्त का लाभ लेते हुए ये फकीर जल्दी-जल्दी आग के शोलों पर पाँव रखते हुए आग को पार करते हैं। इससे उन्हें कोई परेशानी नहीं होती। इसी प्रकार कई साधु अग्नि की लपटों को हाथ पर रखकर आरती करते हैं तथा बाद में उसे मुँह में डाल लेते हैं। सच्चाई यह है कि इसके लिए वे कपूर के बड़े टुकड़े का प्रयोग करते हैं। इसे जलाकर एक सैकेण्ड में तीन बार जल्दी-जल्दी हाथ बदले रहने से न तो हाथ जलता है और उसे जब मुँह में रखा जाता है, तो लार मुँह को जलने से बचाता है। टुकड़ा बड़ा होने के कारण यह अंगारे के रूप में नज़र आता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर कई साधु मशाल से अग्निस्नान करते हैं।

खाली जग में पानी पैदा करने का भी एक चमत्कार कुछ लोग दिखाते हैं इसका आधार यह है कि बर्तन में दो सतहों का होना है। बर्तन के तली में छेद होता है। उसे जब अंगुली से बन्द कर दिया जाता है, तो पानी गिरना बन्द हो जाता है। अंगुली हटा लेने पर पानी दोबारा आने लगता है। इसी विधि का प्रयोग करके केरल में कई साधु लोगों के

घरों का जल मन्त्र-शक्ति से आकाश मार्ग से स्वर्ग में भोजते हैं। इसी प्रकार अस्सी/एक सौ किलोग्राम तक भार अंगुलियों की सहायता से उठाना भी भौतिकी के सिद्धान्त पर आधारित है। मध्यप्रदेश में विमल सागर जैन मुनि ने सी के एक टुकड़े पर मिट्टी की परत रखकर हवन किया था। बाद में जब उसी साड़ी को निकाला गया तो वह जली बिल्कुल नहीं थी। उस साड़ी का एक-एक टुकड़ा पचास-पचास हजार रु. में भर्तों में बेचा गया था। सत्य यह है कि मिट्टी की रत आग की सारी गर्मी सोख लेती है। इस प्रकार उसके नीचे रखी गई साड़ी जली नहीं थी। एक अन्य चमत्कार में बालों के भीतर पानी सोखने वाले स्पंज का गोला रखकर जटाओं से सरलता से पानी निकाला जा सकता है।

ऐसे चमत्कार वस्तुतः ढोंगी लोगों के हाथों की सफाई हैं। जादूगर ऐसे चमत्कार दिखाते फिरते हैं, परन्तु वे ईमानदारी से यह स्वीकारते हैं कि वे विज्ञान व प्राकृतिक व्यवस्था के विपरीत कुछ नहीं करते हैं जबकि दूसरे लोग स्वयं को अलौकिक सिद्धियाँ प्राप्त व्यक्ति घोषित करके दर्शकों को धोखा देते हैं व अन्धविश्वासों को बढ़ावा देते हैं। आवश्यकता है कि वैदिक सिद्धान्तों की तार्किक, दार्शनिक व विज्ञान के दृष्टिकोण से परख की जाए तथा सत्य को ही स्वीकार किया जाए।

— परोपकारी से साभार

* * * * *

क्रोध महा-चाण्डाल

जगंगा के किनारे एक साधु अपनी कुटिया बनाकर रहते थे। एक दिन उन्होंने अपने कपड़े धोए। धूप अच्छी थी, वहीं गंगा के किनारे रेत पर सूखने के लिए डाल दिए। तब स्वयं नहाए। नहा-धोक अपनी कुटिया में जाकर बैठ गए। तभी एक चाण्डाल आया वहाँ। उसे भी गर्मी लग रही थी। उसने सोचा— गंगाजी के शीतल जल में स्नान पर लूँ। स्नान करने के पश्चात् बाहर निकला तो सोचा— कपड़ें मैले हो गए हैं, इन्हें भी धो लूँ। बस, कपड़े धोने लगा।

कपड़े धोने की आवाज़ कुटिया में पहुँची तो साधु ने सोचा कि कपड़े कौन धोता है? बाहर आकर देा तो एक चाण्डाल कपड़े धो रहा है। यह भी देखा कि उसके कपड़ों से उड़नेवाले छीटे साधु के सूखते हुए कपड़ों पर गिर रहे हैं। बस, फिर या था! चढ़ गया क्रोध। दौड़ते हुए वह साधु चाण्डाल के पास पहुँचा और गालियाँ देता हुआ बोला—तू अन्धा है? चाण्डाल होकर यहाँ कपड़े धोता है? तेरे अपवित्र छींटों ने मेरे कपड़ों को अपवित्र कर दिया है। आगे बढ़कर तीन-चार चपत उन्होंने चाण्डाल के मुँह पर लगादिए। चाण्डाल हाथ जोड़कर खड़ा रहा। साधु महाराज चिल्लाकर बोले— फिर मत आना इस स्थान पर।

सलाह : कहीं आपको तो नहीं ग्रीन टी की लत ?

- नीलम शुक्ला

ग्रीन टी भी नुकसानदेह हो सकती है, यह बात सुनने में अटपटी भले ही लगे, पर है सौ प्रतिशत सच। क्यों जरूरी है ग्रीन टी को भी संतुलित मात्रा में पीना, बता रही हैं -

पेट से जुड़ी परेशानियां - ग्रीन टी का अधिक सेवन करना भूख कम कर सकता है। भूख कम लगेगी तो शरीर को जरूरी पोषण नहीं मिलेगा और धीरे-धीरे आपका शरीर भीतर से कमजोर हो जाएगा। साथ ही दिन भर में तीन कप से ज्यादा ग्रीन टी पीने से आपको एसिडिटी की समस्या हो सकती है। खाली पेट तो ग्रीन टी बिल्कुल भी नहीं पीनी चाहिए। इससे कब्ज, मतली, उल्टी आदि का खतरा बढ़ जाता है। अगर सुबह-सुबह ग्रीन टी पीती हैं तो उसके साथ बिस्कुट आदि भी जरूर खाएं।

अति हर चीज की बुरी है। अगर आप अमृत का सेवन भी ज्यादा करेंगे तो यकीनन वह भी नुकसान ही करेगा। ठीक ऐसा ही ग्रीन टी के साथ भी है। ग्रीन टी पीने के ढेरों फायदे हैं, पर साथ ही इसके नुकसान भी हैं। वैसे तो ग्रीन टी पीना इन दिनों फैशन में हो गया है। डायटीशियन डॉ. नीलांजना सिंह कहती हैं कि सेहत पर ज्यादा ध्यान देने वाले लोग, खासतौर पर वो लोग जो अपना वजन कम करना चाहते हैं, हर्बल टी को अपनी डाइट में भरपूर मात्रा में शामिल करते हैं। पर हर्बल टी में कुछ ऐसे तत्व भी शामिल होते हैं, जो आपको नुकसान पहुंचा सकते हैं। यही वजह है कि ग्रीन टी का सेवन भी संतुलित मात्रा में करने की सलाह दी जाती है।

ग्रीन टी है तो एक चाय ही, तो स्वाभाविक है कि उसमें भी चाय या कॉफी की तरह कैफीन भी होगा। हालांकि ग्रीन टी में कैफीन की मात्रा कॉफी या चाय की अपेक्षा बहुत कम होती है। लेकिन दिनभर में ग्रीन टी के अत्यधिक सेवन से सेहत से जुड़ी कई तरह की परेशानियां हो सकती हैं। ज्यादा ग्रीन टी पीने से पेट की समस्या, अनिद्रा, उल्टी, दस्त एवं अन्य स्वास्थ्य समस्याओं की आप शिकार हो सकती हैं। साथ ही ग्रीन टी में कैटेकिन नाम का एक तत्व होता है, जो आयरन को सोखने की शरीर की क्षमता को प्रभावित करता है।

वो ग्रीन टी को कहे न - गर्भवस्था में ग्रीन टी का अत्यधिक सेवन आपको स्वास्थ्य लाभ की बजाय नुकसान दे सकता है। गर्भवती महिलाएं अगर इसे ज्यादा पियेंगी तो उससे गर्भस्थ शिशु को नुकसान पहुंच सकता है। इतना ही नहीं, ग्रीन टी के ज्यादा सेवन से गर्भपात की आशंका भी बढ़ सकती है। दिन में दो कम से ज्यादा ग्रीन टी पीना गर्भवती महिलाओं के लिए कई तरह से खतरनाक साबित हो सकता है। इसमें पाए जाने वाले कैटेकिन से शरीर में आयरन की समस्या हो सकती है। ऐसा आमतौर पर खाने के साथ ग्रीन टी पीने से होता है। अगर आपको ग्रीन टी पीना भी है तो इसे खाना खाने के तुरंत बाद या पहले पीने से बचना चाहिए। अपनी डाइट में विटामिन-सी और आयरन दोनों से भरपूर खाद्य पदार्थों को शामिल करें। शिशु के जन्म के बाद भी ग्रीन टी का अत्यधिक सेवन करने से बचें, क्योंकि अधिक कैफीन दूध के जरिये शिशु तक भी पहुंचता है, जो उसके स्वास्थ्य के लिए ठीक नहीं होता है।

हड्डियां होगी कमजोर - ऑस्टियोपोरोसिस वह स्थिति है, जब शरीर में कैल्शियम की बहुत अधिक कमी से हड्डियां कमजोर हो जाती हैं। वैसे देखा जाए तो ग्रीन टी और ऑस्टियोपोरोसिस का कोई सीधा संबंध नहीं है, लेकिन अधिक मात्रा में ग्रीन टी पी लेने से कैल्शियम यूरिन के माध्यम से शरीर के बाहर निकल जाता है। यानी अत्यधिक ग्रीन टी की वजह से हड्डियों की मजबूती के लिए कैल्शियम का इस्तेमाल नहीं हो पाता और वो शरीर से बाहर निकल जाता है। ऐसे में शरीर में कैल्शियम की कमी ऑस्टियोपोरोसिस का जोखिम भी बढ़ा सकती है।

हो सकता है एनीमिया - ग्रीन टी का अत्यधिक सेवन करने से आपके शरीर में लौह तत्व यानी आयरन की कमी हो सकती है। दरअसल ग्रीन टी में मौजूद टैनिन और कैटेकिन खाद्य पदार्थों और पोषक तत्वों से होनेवाले आयरन के अवशोषण में अवरोध उत्पन्न करते हैं। पर संतुलित मात्रा में ग्रीन टी पिएं तो उसके फायदे कई हैं।

वेदाः
ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

देव यज्ञशील से प्रेम करते हैं, आलसी से नहीं

इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति। यन्ति प्रमादमतन्द्राः॥

— ऋ० ८/२/१८ ; अथर्व० २०/१८/३

ऋषिः—मेधातिथिः काण्वः, प्रियमेधश्चादिरसः॥

देवता—इन्द्रः॥ छन्दः—आर्षीगायत्री॥

विनय—आलस्य मनुष्य का बहुत बड़ा शत्रु देव उन्हें प्रमादों के लिए बार-बार दण्ड दे-देकर, उन्हें है। हम जो नित्य पाप करते हैं उनमें से बहुतों का कारण पुनः-पुनः ठोकरें मारते हुए जगाते रहते हैं। परमात्मा के मन की कुटिलता नहीं होता, किन्तु बहुत बार केवल देव जो यह जगद्रूपी यज्ञ चला रहे हैं उसी के अनुसार- हम आलस्य व सुस्ती के कारण पापी बनते हैं। एवं, उसकी अनुकूलता में जो भी कुछ कर्म मनुष्य करता है बहुत-से अन्यन्त लाभकारी कार्यों को शुरू करके वह सब यज्ञ-कर्म ही है। मनुष्य को इस यथार्थ कर्म के केवल आलस्य से हम उन्हें छोड़ देते हैं और सिवाय और कोई कर्म नहीं करना चाहिए। वही कर्म आत्मकल्याण से वञ्चित हो जाते हैं। अतः आलस्य शुभ है, पुण्य है, यज्ञिय है, जिस द्वारा इस संसार के कुछ करने वाले लोग कभी परमात्मा के प्यारे नहीं हो सकते। अच्छे, ऊँचे और पवित्र बनने में सहायता व सहयोग या यूँ कहना चाहिए कि परमात्मा के देव आलसियों को मिलता है। इस प्रकार का कोई भी कर्म करना इस नहीं चाहते, क्योंकि आलसी लोग देवों के चलाये इस संसार-यज्ञ के लिए सोम-रस का सेवन करना है। संसार-यज्ञ में उनको सहयोग नहीं दे सकते। परमात्मा तनिक देखो-इन देवों के प्यारे लोगों को देखो- जो अपने इन देवों द्वारा जगत् में परिपूर्ण व्यवस्था रखते अपने प्रत्येक कर्म द्वारा संसार-यज्ञ के संवर्द्धक, पोषक हैं- इन द्वारा पूरा नियमन, अनुशासन चला रहे हैं। भूल, इस सोम-रस को पैदा करते हुए और अपने इस कर्तव्य गलती, अनुचितता, अपराध और पाप का ठीक में सदा जाग्रत, कटिबद्ध संनद्ध रहते हुए देव-तुल्य नियमानुसार हमें दण्ड मिलता रहता है- बेचैनी, रोग, जीवन बिता रहे है।

व्यथा, वेदना, क्लेश, मृत्यु आदि द्वारा हमें शिक्षा मिलती रहती है कि हम परमात्मा की आज्ञाओं का उल्लंघन न करें। ये देव इस अनुशासन को बिल्कुल अतन्द्रा होकर भूल-चूक से बिल्कुल रहित होकर- कर रहे हैं। ये सृष्टि के देव उस सत्त्वगुण के बने हुए हैं जोकि तमः को जीतकर रजः को अपने वश में किये हुए हैं, अतः आलस्य-प्रमाद करने वाले तमोगुणी (तमोगुण से दबे हुए) मनुष्य देवों के प्यारे कैसे हो सकते हैं? अतः

शब्दार्थ—देवाः=देव लोग सुन्वन्तम्=यज्ञकर्म करते हुए की इच्छन्ति=इच्छा करते हैं। न स्वप्नाय स्पृहयन्ति=निद्राशील, सुस्सार्तों को नहीं चाहते। अतन्द्राः=स्वयं आलस्य-रहित ये देव-लोग प्रमादम्=गलती, भूल करने वाले का यन्ति=नियमन करते हैं।



अंतरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन के लिए
दिल्ली खाना होते हुये
प्रधान सत्यवीरजी शास्त्री व विदर्भ के प्रतिनिधि

आर्य सेवक, नागपुर

प्रति, _____

प्रकाशक : अशोक यादव, प्रबंधक संपादक एवं मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा
मध्यप्रदेश एवं विदर्भ, नागपुर फोन : 0७१२-२५९५५५६ द्वारा उक्त सभा के लिये प्रकाशित एवं प्रसारित
मुद्रक : स्क्रीन पॉइन्ट अँड डिज़ाईनिंग, रेशिमबाग, नागपूर. मो.नं.: ९३२६८५१५७८५